

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180331

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83
V24 S Accession No. H 3658

Author वंद्योपाध्याय, ताराशंकर

Title अष्टपदी १९५९

This book should be returned on or before the date last marked below.

सप्तपदी

अनुवादक
नेमिचन्द्र जैन



शास्त्राय

ताराशंकर वंद्योपाध्याय

राजकमल प्रकाशन

दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास



राजकमल

प्रथम संस्करण, १९५६

कापीराइट © १९५६ राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

प्रकाशक : राजकमल
प्रकाशन प्राइवेट
लिमिटेड, दिल्ली ।

मूल्य
दो रुपये

मुद्रक : श्री गोपीनाथ
सेठ, नवीन प्रेस,
फंज बाजार, दिल्ली ।

प्रियवर श्री विमलचन्द्रसिंह को सप्रेम

एक

छः फुट लम्बा व्यक्ति; शायद इंच-दो इंच अधिक ही होगा। दीर्घता के अनुपात में कुछ कृश है, पर दुबल या जीर्णदेह नहीं। काला रंग—बंगाल का काला रंग, चमकीला काला। बड़ी-बड़ी दो विषण्ण-दृष्टि आँखें। विषण्णता के अतिरिक्त भी कुछ और है, जिसे देखकर लगता है, इस व्यक्ति का मन बाहर होने पर बहुत दूर है, भीतर होने पर गम्भीर अंतराल में डूबा हुआ है।

पगला पादरी। इस नाम से ही यह व्यक्ति इस इलाके में परिचित है। इसमें यहाँ के लोगों का दोष नहीं, इससे बेहतर उसके व्यक्तित्व को शायद प्रकट नहीं किया जा सकता। पादरी की पोशाक पहनते हैं, पर वह गेरुए रंग में रंगी है। इस इलाके के किसी गिरजाघर के साथ भी उनका कोई सम्बन्ध नहीं। किसी धर्म का भी प्रचार नहीं करते। बस रोगियों का इलाज करते फिरते हैं। पगले पादरी बड़े अच्छे डॉक्टर हैं और साइकिल पर आस-पास के गाँवों के चक्कर लगाते रहते हैं। सड़क के दोनों ओर लोगों से पूछते हैं, “क्यों, कैसे हो सब लोग? अच्छे तो हो?” साथ-साथ मीठी हँसी सारे मुख से भर पड़ती है।

“हाँ बाबा, ठीक हैं।”

“अच्छा, अच्छा, बहुत अच्छा। ठीक से रहो!”

किसी के घर में कोई बीमारी होते ही वह पगले पादरी की प्रतीक्षा में खड़ा हो जाता है। कुछ ही देर में साइकिल की घण्टी सुनाई पड़ेगी, और साइकिल के ऊपर गेरुए वस्त्र पहने पादरी दीख पड़ेंगे। देखते ही

वह हाथ उठाकर पहले से ही कह उठता है—“बाबा साहब !”

छः फुट लम्बे पादरी साहब साइकिल से धरती पर पैर रख देते हैं, उतरना नहीं पड़ता । “क्या हाल-चाल है ? क्यों, क्या हुआ ?”

“बुखार ।”

“कैसे ?”

“मेरे बेटे को ।”

“चलो देखूं !”

जाकर देखते हैं, ~~बेहोश~~ साइकिल के पीछे बँधे हुए दवाइयों के बक्स में से दवा देते हैं । जरूरत होने पर कहते हैं, “मेरे घर आकर दवा ले जाना ।” कागज पर लिख देते हैं । बाँकुड़ा जिले के बीचों-बीच से जो सड़क—यह पुरी की सड़क के नाम से प्रसिद्ध है—विष्णुपुर को छूती हुई मेदिनीपुर होकर समुद्र के किनारे तक चली गई है, जिसमें इधर-उधर से कई-एक और सड़कें भी आ मिली हैं, उसके किनारे ही उनका मिशन अथवा आश्रम है ।

यह शाल के जंगलों और गेरुआ मिट्टी का प्रदेश है । बीच-बीच में पहाड़ी नदियाँ—बीरावती-शिलावती-दारुक्ेश्वर, बीराई शिलाई-दारका । बीच-बीच में लाल पत्थर, कँकरीला बंजर प्रदेश । इसी तरह की ऊँची-नीची धरती एक विशेष पठार के ढंग से टेढ़ी-मेढ़ी चली गई है । पर इसी के दोनों तरफ फिर बंगाल की नरम धरती का प्रसार है । वहाँ खुशहाल भरे-पूरे गाँव हैं, अनाज के खेत हैं ।

उत्तर और मध्य भारत के पहाड़ों और जंगलों की यह पंक्ति उड़ीसा और बिहार के पास से अजीब ढंग से टेढ़ी-मेढ़ी फली की भाँति इधर-उधर फैलकर धीरे-धीरे समाप्त हुई है । मेदिनीपुर से लगाकर बाँकुड़ा जिले के जंगली क्षेत्र इतिहास-प्रसिद्ध हैं । इन पथरीले-कँकरीले, टेढ़े-मेढ़े शाल के जंगलों से घिरे हुए प्रदेशों में जो गाँव हैं, उनमें आदिवासियों के वंशधर रहते हैं—बाउड़ी, बागदी, मेटे, माल, खैरा, संथाल । सामंत-युग में इनके बीच उत्तर भारत के क्षत्रिय—सिंह, राय इत्यादि—मुखिया बन बैठे थे ।

सप्तपदी : ताराशंकर बंधोपाध्याय : ६

ऐसे ही एक-एक परिवार ने आज थोड़ी-थोड़ी दूर पर एक-एक जाति का रूप ले लिया है। उनकी जिंदगी में मामला-मुकदमा, दीवानी-फ़ौजदारी लगी ही रहती है। पक्के काले रंग के पीली आँखों वाले गरीबी से जर्जर अधनंगे मूक इंसानों के बीच गोरे रंग के दीर्घ आकृति और उग्र प्रकृति के मनुष्य विचित्र रूप में मिल गए हैं। एक-एक क्षत्रिय के घर का नाम राज-महल है। इन राजमहलों में टूटी हुई दीवारें हैं, मिट्टी के कच्चे आँगन और पुराने फूस के छप्पर हैं; उनमें मैली-पुरानी धोती पहने, नंगे बदन राजा बैठे-बैठे बीड़ी पीते हैं अथवा हुक्का गुड़गुड़ाते हैं, और एक-दूसरे के साथ कर्कश कण्ठ से कटु भाषा में झगड़ा करते हैं। रानियाँ और राजकुमारियाँ अपने ही हाथों से चूल्हा-चौका करती हैं, कन्धों पर रखकर पानी ले आती हैं, धान भी कूट लेती हैं। आँगन बुहारना, बरतन मलना आदि काम अभी भी उन्हीं काले रंग के लोगों के घरों की स्त्रियाँ करती हैं। पुरुष जमीन जोतते हैं, पशु चराते हैं, जंगल से लकड़ी काटते हैं। कहीं-कहीं एक-आध घर दलपति या नायक-बागदी का भी अभी तक मिल जाता है। दलपति नायक इनकी उपाधि है। ये लोग शायद किसी जमाने में क्षत्रिय सामंतों के अधीन योद्धा सरदार थे। ये लोग जंगली इलाकों में वनों से घिरे सामंतों के दिये हुए गाँवों के बीच अपनी जाति और परिवार एवं नौकर-चाकरों को लेकर मद्य-मांस और मोटे लाल चावल का भात खाकर, दुर्दान्त साहस के साथ शिकार में और सन्ध्या को मादल के साथ नाच-गाने में जीवन बिताते थे। पठान-मुगल-युद्ध के जमाने से इनकी कहानी जनश्रुति नहीं इतिहास हो गई है। मुगल-साम्राज्य के अन्तिम दिनों में मराठा-युद्ध के समय इन्होंने बाकायदा लड़ाई की है। जंगलों में छिपकर पेड़ों के ऊपर छिपकर तीर चलाए हैं; रात के अँधेरे में पीछे से आकर छापे मारे हैं; खदेड़े जाने पर घर-बार छोड़कर घने जंगलों में जा छिपे हैं। ईस्ट इंडिया कम्पनी के काल में कम्पनी की फ़ौज के साथ भी इनकी लड़ाई हुई है। सामन्त राजाओं द्वारा अधीनता स्वीकार कर लेने पर भी ये लोग, ये सरदार, युद्ध करते रहे थे।

बागदी सरदार गोवर्धन दलपति की लड़ाइयों का हाल तो कम्पनी के कागज-पत्रों में लिखा हुआ है। गोवर्धन दलपति अपने इलाके की सीमा बचाकर ही सन्तुष्ट नहीं था, उसने कम्पनी की सीमा में से भी कुछ इलाके दखल कर लिये थे; दिन-दिहाड़े एक के बाद एक गाँव लूटकर, जलाकर, गाँव की सड़कों पर आदमियों के सिर काटकर लटका जाया करता था।

इन्हींका एक-आध घर आज भी दिखाई दे जाता है।

मैदानी इलाकों में ब्राह्मण, कायस्थ, वैद्य, नवशाक आदि जातियों के गाँव इनसे कुछ दूर हैं। उन सब गाँवों में बागदी, मेटे, माल आदि जातियों के लोग हैं, पर उनका रूप इनसे कुछ अलग है। खून की गरमी और गाढ़पन में शायद कुछ अन्तर आ गया है।

शाल-वनों में फूल खिलने के साथ-साथ अरण्य इन लोगो को आज भी हाथ के इशारे से बुलाने लगता है। शाल के साथ-साथ ही है पलाश और महुआ। पलाश के फूल के रंग से आज भी ये लोग अपने कपड़े रंगते हैं; महुए की शराब बनाते हैं। बीच-बीच में आबकारी विभाग की पुलिस छापा मारती है, पर ज्यादातर पकड़ नहीं पाती। दूर-दूर फैले हुए शाल के जंगलों के बीच इनका अड्डा कहाँ है, यह ढूँढ़ निकालना प्रायः असम्भव है। कभी-कभी पकड़े भी जाते हैं, और फिर जेल भी काटनी पड़ती है, पर वह इन लोगों के लिए बड़ी बात नहीं। बीच-बीच में शिकार के लिए निकलते हैं। इस मामले में संथाल इनसे आगे हैं, पर ये भी कभी-कभी निकल पड़ते हैं। मोर, जंगली मुर्गा, तीतर, खरगोश, हिरन, सुअर, भालू आदि को मारकर बहुत उत्साहित होते हैं। खास तौर पर सुअर-भालू का उत्पात होने पर तो ये लोग बेचैन हो उठते हैं। कभी-कभी शेर भी आ जाता है। उसके साथ लड़ने योग्य दुर्दान्त साहस आज शायद नहीं रहा, पर शेर आने पर स्थानीय बन्दूक वाले शिकारी बाबुओं को खबर देते हैं; थाने की मारफत विष्णु-पुर शहर के अधिकारियों के पास भी खबर भिजवाते हैं। लगभग दो

सप्तपदी : ताराशंकर बंछोपाध्याय : ११

सौ वर्ष की लगातार गुलामी और चतुरतापूर्ण शोषण के कारण इनकी जिन्दगी से सब तरह का अभिमान लगभग चला गया है, किन्तु साहस और उल्लास बहुत अधिक नहीं मिटा है। बस आज शेर आने पर भाला, बल्लम, धनुष लेकर उन्मत्त आनन्द के साथ उससे लड़ने के लिए निकल पड़ना अब नहीं चाहते। जीवन का मूल्य जब बढ़ा नहीं है तब इतने भय में क्या सन्देह है !

इन्हीं सब लोगों के बीच रहते हैं ये पगले पादरी।

शाल-वन के किनारे लाल मिट्टी पर एक छोटा-सा गाँव है। पास से ही चली गई है पुरी की पक्की सड़क। उत्तर-पश्चिम की ओर मोरार गाँव में वैसलियन चर्च का दो-मंजिला भवन है। एकदम छोटा नगण्य-सा गाँव है। शाल-वन यहाँ आकर कुछ विरल और हल्का-सा हो गया है। गाँव के भी बाहर, जहाँ से शाल-वन घना होने लगता है, वही छोटा-सा एक बँगलेनुमा मकान है, जिसमें तीन-एक कमरे हैं। यही है पगले पादरी का बसेरा। संगी-साथियों में एक पक्षी, दो गाय और एक दम्पति है—जोसेफ और सिन्धु। जोसेफ का परिवार कई पीढ़ियों से ईसाई है। जोसेफ लाल सिंह। सिन्धु माभियों की बेटी है। वह ईसाई नहीं। ब्याह भी इन लोगों का नहीं हुआ। दोनों एक-दूसरे के प्रेम में पड़कर घर-बार, नाते-रिश्तेदार, समाज सबको छोड़कर चले आए हैं। आकर पगले पादरी के पास आश्रय लिया। जोसेफ थोड़ी-सी अंग्रेजी जानता है। पगले पादरी ने उसे कुछ कम्पाउण्डरी भी सिखा दी है। वह कम्पाउण्डरी करता है और लड़कों की पाठशाला में पण्डिताई भी। सिन्धु पक्षियों की देख-भाल करती है। इस बँगले की गृहिणी भी वही है; गृहस्थी रसोई सब उसीके हाथ में है। और एक संथाल लड़की भी यहाँ रहती है। नाम है भुमकी। २५-२६ वर्ष की अपूर्व स्वस्थ लड़की है। ऐसे डील-डौल वाली सरल लड़की हमेशा नज़र नहीं आती।

पगले पादरी ने उसे बड़ी मुश्किल से मौत के मुँह से बचाया है। भुमकी का तीन बार ब्याह हुआ है, पर तीनों ही स्वामी थोड़े-थोड़े

दिन बाद मर गए। उससे सबको सन्देह होने लगा कि भुमकी डाइन है। संचाल-समाज के मुखियों ने इसे मृत्यु-दण्ड दिया। पगले पादरी को पता चलते ही वह साइकिल पर चढ़कर तूफान की तेजी से वहाँ पहुँचे और बड़ी मुश्किल से उसे छुड़ाकर ले आए। इस गाँव के संचाल मुखिया को उन्होंने इलाज करके बचाया था। वह और भी बहुतों का इलाज कर चुके हैं। पगले पादरी को वे लोग ठुकरा नहीं सकते। पगले पादरी ने उन्हें यह वचन दिया कि अब भुमकी कभी किसी समय गाँव में नहीं जायगी, वह उन्हींके मकान में रहेगी, गायों की सेवा करेगी और फूल-पौधे लगायेगी।

“उसे क्रिस्तान तो नहीं करेंगे, बाबा साहब ?”

“नहीं।” उसके बाद हँसकर कहा था, “मैं क्या क्रिस्तान हूँ, माँझी ?”

बूढ़े संचाल सरदार ने कहा था, “कौन जाने ! लोग कहते हैं तुम जरूर क्रिस्तान हो; पर क्रिस्तान कहते हैं नहीं हो। तुम्हारी कोई जात नहीं। तुम्ही जानो कि तुम क्या हो !”

पगले पादरी जोरों से हँस पड़े थे। फिर बोले थे, “लोग कहते हैं, माँझी, मेरी कोई जात नहीं। पर इंसान तो हूँ। तुम भी इंसान हो, मैं भी इंसान; और वह लड़की भी इंसान।”

“तुम इंसान जरूर हो, वह नहीं। वह जरूर डाइन है।”

“मैंने तो इलाज करके तुम्हारा इतना बड़ा भूत का रोग ठीक कर दिया—तुम्हीं बताओ ! मैं उसका भी डाइन रोग ठीक कर दूँगा।”

“कर दोगे। कहते हो इसे ले जाओगे, तो ले जाओ !”

तभी से भुमकी भी यही रहती है, गायों की सेवा करती है, बँगले में फूल-पौधे लगाती है। कभी-कभी बँगले की सीमा के बाहर सड़क पर भी निकल आती है, पर किसी संचाल स्त्री-पुरुष को देखते ही डरकर छिप जाती है, चाहे जहाँ हो। कहीं वे लोग फिर कहने लगे कि वह उन्हें स्या गई !

वह कभी-कभी पगले पादरी के कमरे में भी घुस आती है। पगले पादरी शायद आँखें बन्द किये कपड़े की आराम-कुरसी पर बैठे हैं। किसी के जल्दी-जल्दी आने की आहट सुनते ही पूछते हैं, “कौन ?”

फुसफुसाकर भयभीत मुद्रा में वह किसी अँधेरे कोने अथवा आलमारी के पास से उत्तर देती है, “मैं बाबा साहब, भुमकी !”

बाबा साहब मुख उठाकर उसकी ओर ताकते हैं। छुष्पांगी अरण्य-बाला की सफ़ेद चमकती हुई आँखों की ओर देखते ही, स्वच्छ जल की सतह पर काँपती हुई जल-घास की भाँति उस दृष्टि में उसका भय-प्रकंपित अन्तर दीख जाता है। पूछते हैं, “डर गई ! बाहर कोई माँभी आ गया है शायद ?”

वह अपने बड़े सबल हाथों को एक अन्य दिशा में बढ़ाकर दिखाती हुई कहती है, “अँ-हँ, आन-परम ।” अर्थात् नहीं-नहीं, उस तरफ, उस तरफ ।

बाहर नहीं आये हैं, उस तरफ जा रहे हैं ।

बाबा साहब उसे अभय देकर बाहर आते हैं। जाने वालों को बुलाकर उनकी ही भाषा में बातचीत करने लगते हैं; बेधड़क बोलते चले जाते हैं ।

साधारणतः वह इस जिले में चालू बँगला भाषा में ही बातचीत करते हैं। कोई समझ नहीं सकता कि ये यहाँ के आदमी नहीं। उनमें से कोई-कोई पूछता है, “हाँ बाबा साहब, हम लोगों की बोली इस तरह कैसे सीख ली आपने ?”

साहब प्रसन्न होकर उन्मुक्त हँसी में ऐसे हिलने लगते हैं जैसे तेज हवा में शाल के वृक्ष। कहते हैं, “तुम लोगों से मुहब्बत है इसलिए ! उसी मंतर से सीख ली ! हँ !”

उसके बाद फिर कहते हैं, “तुम्हीं कहो, जिससे तुम्हें मुहब्बत हो उसका मुँह देखकर तुम उसके जी का सुख-दुःख नहीं समझ लेते ? समझ लेते हो न ? जी की बात मुँह देखकर समझी जा सकती है, तो मुँह की

बात कान से सुनकर सीख ली तो इसमें ऐसी कौनसी बड़ी बात हुई !
ऐं ?”

स्वर-उच्चारण सब मानो एकदम एक तार में बँधा हो ।

प्रश्न करने वाले के मन में रत्ती-भर भी संदेह नहीं रहता । उसका सारा हृदय उपलब्धि से आप्लावित हो जाता है, अपने-आप ही वह गरदन हिलाकर हामी भरता है—ठीक बात है, ठीक बात है !

पर उनकी अंग्रेजी सुनकर सभ्य समाज के बहुत लोग शक करते हैं, आदमी मद्रासी या दक्खिन भारत का ही होगा ।

नाम भी है—रेवरेण्ड कृष्णस्वामी ।

मुख पर भी खोजने से चिह्न मिल जाते हैं । छः फुट लम्बा, मोटे हाड़ वाला, चरबी-रहित व्यक्ति, चमकता हुआ काला रंग, घने काले मोटे-से बाल; दक्खिन के लोगों-जैसी ही बड़ी-बड़ी आँखें ।

दृष्टि अवश्य ही कुछ विचित्र है । वह शायद व्यक्तिगत है । विषण्ण होकर भी प्रसन्न । वर्षा के बाद हल्के-हल्के बादलों से ढके हुए शांत स्निग्ध आकाश की भाँति बादलों के भीने आवरण को भेदकर फूट पड़ने वाली नीलाभा की भाँति ही विषण्ण दृष्टि में प्रसन्नता का आभास खिल उठता है । सबसे अच्छा लगता है इस आदमी का हँसना । फ्रेंचकट दाढ़ी और मूँछों के बीच से जब सुन्दर दाँतों की पंक्ति प्रसन्न हँसी से चमक उठती है, तब आस-पास के लोगों के मन के भीतर भी मानो उसी प्रसन्नता की छटा बिखर जाती है ।

दो

उन्नीस सौ चवालीस का साल ।

महायुद्ध की विभीषिका एक अन्धड़ की भाँति सारे देश के ऊपर से बही जा रही है । देश, समाज, घर-गृहस्थी सब टूट-फूटकर ढहे जा रहे हैं । अकाल और महामारी में लोग ऐसे मरे हैं जैसे तूफान के आघात से पशु-पक्षी । चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है । देश-व्यापी स्वतंत्रता-आंदोलन कुछ समय के लिए क्षीण हो उठा है । अँग्रेजों और अमरीकियों की फौजी तैयारियों का जाल बंगाल के एक सिरे से लगाकर दूसरे सिरे तक छा गया है । चटगाँव, फेनी, गोहाटी, डिगबाई, दीमापुर, कोहिमा से लगाकर उखरा, पानागढ़, प्याराडोबा, वासुदेवपुर, खड़गपुर, मेदिनीपुर तक फौजी अड्डों की एक विचित्र-सी शृंखला बन गई है । एक के साथ दूसरे का पक्की सड़कों द्वारा सम्बंध एक विस्तीर्ण विराट् पृथ्वीव्यापी मकड़ी के जाले-जैसा लगता है ।

हर गाँव में अनाज की कमी से हाहाकार मचा है; हर शहर में भूख से दुखी हड्डियों के ढाँचे-जैसे भिखारियों की करुण कातर प्रार्थना सुनाई पड़ती है : “थोड़ा माँड़ ! मुट्ठी-भर जूठन ! माँ जी ! माँ जी !”

दुकान पर चावल के बदले चूरा मिलता है, और उसमें मिली हुई बालू, धूल, कंकड़ ।

इन्हीं सबके बीच चलते हैं फौजी काफिले । जीप, टैंक, वेपन-कैरियर—और भी तरह-तरह की अजब-अजब शकलों की मोटर-गाड़ियाँ । सिर के ऊपर मँडराते हैं अँग्रेज और अमरीकियों के लड़ाकू हवाई जहाज ।

गाड़ियों में चलती हैं अंग्रेजी और अमरीकी पलटनें । उन्हीं के साथ-साथ नीग्रो अफ्रीकी । चलते-चलते रास्ते में खेतों के बीच इस देश के अकाल-पीड़ित भूखे लोगों के ऊपर आकर गिरते हैं नारंगी के छिलके, चबाये हुए कौवे । चीखकर पुकारते भी जाते हैं, एऽ—। हाथ के इशारे से भी बुलाते हैं ।

ही-ही करके हँसते हैं ।

कोई-कोई रुपया-धेली भी फेंकते हैं । लोगों की भीड़ उसके ऊपर टूट पड़ती है । सूखी मिट्टी की धूल उड़ने लगती है और उनके सारे शरीर पर छा जाती है । विदेशी सैनिकों के कमरे क्लिक-क्लिक शब्द से मुखर हो उठते हैं ।

बीच-बीच में अमरीकी सिपाहियों के दल जीपगाड़ियों में चढ़े चले जाते दिखाई पड़ते हैं । कोई एक स्वर से गा रहा है, अथवा नशे में चूर शोर-गुल कर रहा है । ठीक बीचों-बीच शहर से जुटाई हुई एक-दो निम्न-कोटि की वारांगनाएँ होती हैं—विलायती शराब के नशे में खिसकते हुए वस्त्र, लड़खड़ाती हुई देह । वे भी प्रमत्त उल्लास से सैनिकों के अट्टहास के साथ हँसकर स्वर मिलाने की चेष्टा करती है । राह-बाट में युवती स्त्रियों को देखते ही सैनिक चिल्लाते हैं—हलो हनी ! माई हनी !

प्याराडोबा में एक हवाई अड्डा बना है । कुछेक मील दूर वासुदेवपुर में भी एक छोटा-सा अड्डा है । मोरार में वेसलियन चर्च के बँगले के सामने, पुरी की सड़क और एक स्थानीय सड़क के चौराहे के पास, शाल-वन से लगे हुए स्थान में खोदकर पेट्रोल की बड़ी-बड़ी टंकियाँ लगाई गई हैं । यहाँ से पाइप-लाइन चली गई है वासुदेवपुर और प्याराडोबा तक । बुलडोज़रों के द्वारा मिट्टी खोदकर पेड़ काटकर जंगल के बीच कुछ ही दिनों के भीतर एक विचित्र फौजी अड्डा बन उठा है, मय-दानव के हाथों की माया-पुरी की भाँति । प्याराडोबा स्टेशन से रेल-लाइन आई है । यहाँ बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ आकर ठहरती हैं । गाड़ियों से उतरते हैं मदहोश विदेशी सैनिकों के दल । अमरीकी सिपाहियों की जेबों में नोटों की गड़्डियाँ होती हैं । साथ में बहुत-सा डिब्बों में बन्द खाने का सामान, बिस्कुट, रोटी ।

सप्तपदी : ताराशंकर वंद्योपाध्याय : १७

रेल-लाइन के पास साइडिंग में दो-चार नहीं, अनगिनती डिब्बों का ढेर लग गया है।

भूखे अकाल-पीड़ित अधनंगे इंसान डिब्बे उठा ले जाते हैं, चाट-चाट-कर खाते हैं। दिन-रात आसमान को गुंजाते हुए बममार और लड़ाकू हवाईजहाज सिर के ऊपर चक्कर काटते रहते हैं। कोई उतरता है, कोई ऊपर उड़ता है।

संध्या होते ही बिजली की बत्तियाँ जल उठती हैं। खोल से ढँकी हुई हैं, फिर भी उनकी रोशनी इधर-उधर फैल जाती है। सैनिक नाच-घर में बाजे बजते हैं, नाच होता है। अट्टहास गूँजता रहता है। भींगुर की भंकार से मुखरित शाल-वन के बीच निविड़ अंधकार जैसे चौंक उठता है। शायद कोई दो सौ वर्ष पहले सामन्त राजाओं के राज में पाइकों की मशालों की रोशनी, मादल की आवाज़, तथा हा-रा-रा ध्वनि-तांडव के बाद इस वनभूमि का अंधकार इस प्रकार कभी नहीं चौंका होगा। मराठों के राज के बाद से इधर के जंगली गाँव भय से रोशनी बुझाकर अंधेरे के परदे में छिपकर इस प्रकार कभी नहीं सोये। ये सब गाँव पक्की सड़क से दूर-दूर हैं, जंगल के भीतर की तरफ। वहाँ के लोग अंधेरे में सुनते रहते हैं—पक्की सड़क पर घर-घर करती हुई मोटरें चल ही रही हैं, चल ही रही हैं।

पगले पादरी ने कुछ हटकर अपना बसेरा बना लिया है—पक्की सड़क से और भी दूर जंगल के बीच। वह जहाँ थे उस गाँव को ही फौजी अधिकारियों के हुक्म से हटा दिया गया है।

रेवरेण्ड कृष्णस्वामी जंगल के भीतर पगडंडियों पर होकर साइकिल से पक्के रास्ते पर आ जाते हैं। बुधवार और शनिवार को वह मोरार के मोड़ से बहुत दूर, विष्णुपुर की ओर बढ़कर ओन्दा चले जाते हैं; वहाँ लेपर असाइलम में कुण्ठ रोगियों का इलाज करते हैं। पुरी से लगा-

कर दसा इलाके में कुष्ठ रोग का बहुत जोर है। कुष्ठजन्य अंधापन इस क्षेत्र में अभिशाप की भाँति है। सप्ताह में दो दिन कृष्णस्वामी बहुत सवेरे ही उठकर चले जाते हैं और शाम को लौटते हैं।

असाढ़ का आरम्भ था। कृष्णस्वामी शाम को लौट रहे थे। उनकी विचित्र पोशाक के साथ सिर पर एक देसी ताल की पत्तियों का टोप है, आँखों पर धूप का चश्मा। अभी वर्षा शुरू नहीं हुई है। असाढ़ के लम्बे दिन में पृथ्वी के अधिक-से-अधिक समीप सूर्य की गरमी से धरती मानो झुलसी जा रही है। जुते हुए खेतों के ऊपर गरम हवा में धूल उड़ रही है। बाबा साहब अपनी अभ्यस्त गति से साइकिल चलाए जा रहे हैं। पक्की सड़क छोड़कर किनारे-किनारे ही चल रहे हैं। फौजी मोटरें भयंकर गति से आती हैं, पल-भर की अन्यमनस्कता अथवा हिसाब में भूल होते ही सड़क के किनारे ठूँठों से जोर से टकरा जाती हैं। टूटकर गाड़ी उलट जाती है, चलाने वाले और दूसरी सवारियों का आर्तनाद सुनाई देता है। कभी-कभी रास्ता छोड़कर खेतों में जा गिरती है। दो-चार उलट भी जाती हैं और सवारियाँ छिटककर गिर पड़ती है। चोट हल्की होने पर उठकर धूल झाड़ते हैं और हा-हा करके हँसते हैं। दो-चार चलाने वाले आश्चर्यजनक दृढ़ता के साथ स्टीयरिंग को पकड़े जुते हुए खेतों में कुछ दूर चलाकर धीरे-धीरे चाल कम करके ब्रेक लगा लेते हैं। फिर गाड़ी से उतरकर अपनी भाषा में अश्लील गालियाँ बकने लगते हैं, अकारण ही। आश्चर्य की बात है, भगवान् का नाम नहीं लेते।

रेवरेण्ड कृष्णस्वामी सोचते-सोचते चल जा रहे थे। मराठों के आतंक के समय, छिहत्तर के अकाल में, सामंत राजाओं के साथ युद्ध के जमाने में, गाइक-विद्रोह के दिनों में भी क्या देश की ऐसी ही हालत हुई थी? इंसान क्या ऐसा ही खोखला हो गया था? उसके अन्तर का संचय क्या इतना ही क्षीण और क्षणजीवी है?

हाय बुद्ध ! हाय क्राइस्ट ! हाय ईश्वर के पुत्र !

फिर भी इस देश के इन अकाल-पीड़ित सर्वस्वहीन शिक्षा-वंचित

सप्तपदी : ताराशंकर वंछोपाध्याय : १६

निवासियों का कोई सहारा तो है। भावी युग-मनुष्य के सामने कुछ बचाव अवश्य है। पर ये विदेशी सैनिक, ये तो उनसे भी अधिक अभागे हैं—मौत के डर से अधीर, असहाय ! तीव्र आतंक इन्हें दिन-रात खदेड़े फिरता है। ये लोग गले तक शराब पिये साँस रोककर जान हथेली पर रखे दौड़े चले जाते हैं और पेड़ से टक्कर खाकर मरते हैं। गाड़ी उलटने से नीचे दबकर कुचल जाते हैं। दौड़ते-दौड़ते रास्ते में जो कुछ भी भोग के लिए मिलता है उसे ही भोग करते जाते हैं। कहाँ है शिक्षा, कहाँ है सभ्यता, कहाँ है जीवन का गौरव ?

हाय क्राइस्ट !

सूली पर विद्ध होकर तुम्हारी मृत्यु ही सत्य है, पुनर्जीवन केवल कल्पना है। मनुष्य का रचा झूठा आश्वासन !

हाय बुद्ध ! हाय चैतन्य !

चैतन्यदेव इसी पथ द्वारा पुरी से गया गये थे। खोल-करताल के साथ इन सब प्रदेशों में धरती-आसमान हरि नाम से मुखरित हो उठे थे।

विष्णुपुर के वैष्णव देवता भी झूठे हैं। वे भी तो मनुष्यों की रक्षा न कर सके। राजा गोपाल देव की पुकार भी झूठी है, उनके हरि-कीर्तन का भी कोई फल नहीं हुआ। अपनी रक्षा की शक्ति न सही, उनकी ही भाँति प्रचण्ड बर्बर शक्ति को रोकने की क्षमता मनुष्य की न सही, अपनी आत्मा की रक्षा करने की शक्ति भी उन्हें न मिल सकी। सुमिरिनी की भोली एकदम फटे चिथड़े की भोली है।

सामने ही रेल का फाटक है। कृष्णस्वामी ने साइकिल से अपने दोनों पैर धरती पर टिका दिये। छः फुट लम्बे आदमी के लिए इतना ही काफी था। फाटक के पास ही चौकीदार का घर है।

कृष्णस्वामी की विचार-शृंखला टूट गई। वह यथार्थ की दुनिया में लौट आए। यही जीवन है। यह जीवन जब तक है, तब तक अपना काम करते रहना होगा।

“वंशी ! वंशी हे !”

चौकीदार के घर का दरवाज़ा खुल गया। चौकीदार रामचरन बाहर निकल आया। “बाबा साहब !”

“हूँ ! वंशी कहाँ है ?”

वंशी रामचरन का लड़का है। उसे कोढ़ है—पहली ही अवस्था में। कृष्णस्वामी ने ही इधर से आते-जाते एक दिन रास्ते में बालक के चेहरे को देखकर पहचाना था। बहुत समझा-बुझाकर इलाज के लिए राजी किया था। इस रोग के इंजेक्शन में बड़ा दर्द होता है। वंशी ज्यादातर भाग निकलता है। कृष्णस्वामी वंशी को बहलाने के लिए कुछ-न-कुछ लेकर ही आते हैं। किसी दिन कोई गुड़िया, किसी दिन कोई तस्वीर, किसी दिन कोई खाने की चीज, किसी दिन और कुछ। आज भी वंशी भाग गया है। रामचरन ने चारों ओर देखा, पर बेटे का कहीं पता नहीं। वह ऊँचे स्वर से पुकारने लगा—“ओ—वन—शी—हो ss। वन—शी—हो ss !”

कृष्णस्वामी साइकिल चौकीदार के घर की दीवाल से टिकाकर चबूतरे पर आकर खड़े हो गए। रामचरन की स्त्री ने कमरे से निकलकर एक मूढ़ा बिछा दिया। कृष्णस्वामी ने मूढ़े के ऊपर बैठकर अपने चोगे की जेब से एक बाँसुरी निकाली। बोले, “इसे बजाकर बुलाओ ! हूँ ! बाँसुरी की आवाज सुनते ही पास कहीं होने पर अभी आ जायगा।”

परन्तु उससे पहले ही सामने सड़क के किनारे एक आम के पेड़ के ऊपर से वंशी धम्म से कूद पड़ा। “आ रही है ! आ रही है ! वही है बाबा, एकदम वही है !”

कौतूहल की तीव्रता से उसका थोड़ा-सा सूजा हुआ मुख मानो तम-तमा उठा है। दोनों आँखें जल-सी रही हैं।

“कौन ? कौन आ रही है जी वंशीवदन ?” हँसकर कृष्णस्वामी ने पूछा। “मैं तुम्हारे लिए कैसी बाँसुरी लाया हूँ देखो तो ! वंशीवदन के लिए वंशी !”

पर वंशी का मन बाँसुरी से नहीं आकर्षित हुआ। उसकी स्थिर

जलती हुई दृष्टि सामने सड़क की ओर ही लगी हुई थी—दूर पर सड़क जो मोड़ लेती थी, उसीके सिरे पर। उसने शायद पिता से ही कहा, “वही लड़की ! वही जिसने सिर पर चमकदार रंगीन फेंटा बाँध रखा था। पेड़ के ऊपर से मैंने देखा है। गाड़ी आँधी की तरह आ रही है, और रंगीन फेंटा बाँधे वह उसमें बैठी है। धूप के मारे भकभक भकभक कर रही है। हँ। वोह—वोह—वोह !”

दूर मोड़ के सिरे पर जीप की गरज अब सुनाई देने लगी थी। सचमुच कोई जोप आ रही है। सचमुच पीछे से पड़ती धूप में किसी के सिर पर गहरी लाल टोपी साफ दिखाई देती है।

रामचरन बोला, “बहुत देखा बाबा साहब ! पर ऐसी औरत हमने बाप-दादा के जमाने में भी नहीं देखी थी। एकदम मेम साहब है !”

कृष्णस्वामी हँसने लगे। धोती, चादर और चट्टी के देश में केवल धोती पर जीने वाले गरीब रामचरन और इस बालक वंशीवदन का मन किसी विचित्र वेश वाली विदेशिनी को देखकर विस्मय से अभिभूत हो गया है। जीप सचमुच ही तूफान की तेजी से आ रही है। औरत—हाँ, इन लोगों ने कहा है कि औरत है—लाल टोपी पहने हुए वह स्त्री जैसे काँप रही है, गिरी पड़ रही है, इधर से उधर। जीप में सामने चालक के पास ही बैठी लड़खड़ा रही है। लगता है श्वेतांगिनी है। पास बैठा हुआ चालक बलिष्ठ देह का एक गोरा है। बदन पर सिर्फ बनियाइन है, सिर पर टोपी है, अफसर की टोपी। चाल धीमी करके मोड़ लेकर गाड़ी फाटक पार कर गई। पर कुछ ही दूर जाकर ब्रेक लगने से खड़ी हो गई। धक्के से स्त्री बाहर गिरते-गिरते बची ; सामने डैश-बोर्ड पर गिरते ही किसी तरह एक छड़ को जोर से पकड़ लिया। गाड़ी फिर पीछे हटने लगी। आकर रामचरन के घर के सामने खड़ी हो गई। गोरा सैनिक उतरा।

उसकी पतलून के कपड़े का चिकनापन देखते ही कृष्णस्वामी समझ गए कि अमरीकी अफसर है।

“हे—मैन ! वाटर ! वाटर ! पानी !”

रूँधे हुए कण्ठ से आदेश के स्वर में स्त्री बोली, “पानी लाओ ! यू—यू, सुनता नहीं !”

कृष्णस्वामी उठकर खड़े हो गए। आँखों से धूप का चश्मा उतार चबूतरे से उतरकर जीप के पास आ खड़े हुए। स्थिर दृष्टि से युवती की ओर ताकते रहे। सचमुच उसका वेश विचित्र था। पश्चिम के आधुनिकतम फैशन का लाल रंग का लम्बा पतलून अथवा स्लैक्स, आधी बाँहों का टेनिस-कालर वाला रेशमी ब्लाउज, सिर पर रंगीन चमकदार रेशमी कपड़े के लम्बे टुकड़े का शिरोभूषण। आश्चर्य रूप से लालसा जाग्रत करने वाला मोहक वेश। और वैसा ही निर्लज्ज !

अमरीकी अफसर ने उनके सामने आकर पतलून की जेब से एक नोट निकाल कर सामने रखते हुए कहा, “डोण्ट यू अण्डरस्टैन्ड, मैन ? वाटर, पानी—पानी—”

युवती भी करीब-करीब साथ-ही-साथ कह उठी, “यू स्वाइन !”

अमरीकी अफसर ने इस बार डाँटते हुए कहा, “यू बिच, स्टाप, आई से यू स्टाप !”

कृष्णस्वामी ने हँसकर शुद्ध अँग्रेजी में कहा, “प्लीज ! प्लीज डोण्ट एब्यूज हर लाइक दैट, शी इज इल ।”

“नर्थिंग। यू डोण्ट नो मैन ! एक बोतल वह कुतिया गट-गट निगल गई है। नशे में है। पानी दो ! सोच रहा था रास्ते में कोई तालाब मिलने पर उसे गोता देकर सब नशा छुड़ा दूँगा। तुम लोगों का घर देखकर यहीं रुक गया। लगता था बेहोश हो जायगी। नशा, सिर्फ नशा ।”

कृष्णस्वामी ने कहा, “मैं डाक्टर हूँ। मुझे साफ़ दीख रहा है कि वह बीमार है। मेरी बात सुनो, तुम उसे उतार लो ! उसे फौरन देख-भाल की जरूरत है। मेरे इस बैग में दवाइयाँ हैं। एक खुराक दवा दूँगा। मेरा विश्वास करो, मैं मेडिकल कालेज का पासशुदा डाक्टर हूँ ।”

इसी बीच युवती गद्दी के ऊपर लुढ़क गई ।

कृष्णस्वामी ने अपनी दोनों लम्बी बाँहें फैलाकर उसे उठा लिया । बोले, “रामचरन, अपनी खटिया बिछा दो !” कुछ पल स्थिर दृष्टि से मुख की ओर देखते रहे । फिर दृष्टि हटाये बिना ही बोले, “अफिसर, प्लीज़ उसके सिर से वह कपड़े का टुकड़ा खोल दो ।”

अफसर ने हाथ बढ़ाया और थोड़ा-सा भटका देकर सिर का कपड़ा खींचकर खोल दिया । आश्चर्यजनक घने काले केश बिखर गए ।

कृष्णस्वामी ने बड़े यत्न से उसे खाट पर सुला दिया । बहुत शुश्रूषा के बाद युवती को होश आया । एक खुराक दवा भी उसे कृष्णस्वामी ने पिलाई थी । होश आने के पहले उसने भड़भड़ाकर बहुत-सा वमन किया, जिससे उसके शरीर का वस्त्र सन गया । थोड़ा-सा कृष्णस्वामी के हाथ और कपड़ों में भी लगा । दुर्गन्ध से उस जगह की हवा मानो दूषित हो उठी । कृष्णस्वामी ने यत्नपूर्वक सब-कुछ धोकर फेंक दिया । अफसर निर्लस भाव से बैठा-बैठा देखता रहा और लगातार सिगरेट पीता रहा । बीच-बीच में दो-चार बातें भी कही थी । सभी प्रश्न-सूचक थीं । मानो रह-रहकर हठात् मन में उठ रही हों—असंबद्ध । एक बात का दूसरे के साथ कोई सम्बन्ध नहीं ।

बेहोश युवती अचेत-सी पड़ी थी । उसके मुख की ओर ताककर अमरीकी अफसर ने कहा, “इज़ण्ट शी व्यूटिफुल ? फ़ाइन आइज़ एण्ड आइलिड्स—इज़ण्ट इट ? हे, व्हट इ यू से ?”

कृष्णस्वामी ने देख-भाल करते-करते ही कहा, “यस, शी हैज़ गाट ए स्वीट फेस ।”

सचमुच युवती रूपवती है, और रूप में आश्चर्यजनक मोहिनी है । खासकर सिर के घने काले केश, अपूर्व सुन्दर आँखें और पलकें । पलकों के रोएँ लम्बे हैं जो सुन्दर आकृति की आँखों को और भी सुन्दर बना देते हैं ।

थोड़ी देर बाद अफसर ने फिर पूछा, “इज़ इट एनीथिंग बेरी

सीरियस ?”

कृष्णस्वामी ने कहा, “हो सकता था । नशे के ऊपर इस गरमी में हीट स्ट्रोक हो सकता था । अभी भी डर है !”

फिर कुछ-एक मिनट बाद सवाल हुआ, “तुमने कहा था कि तुम डॉक्टर हो ! क्वालिफ़ाइड मेडिकल मैन । लगता भी यही है । पर ऐसी पोशाक क्यों है तुम्हारी ?”

“मैं एक संन्यासी हूँ । भारतवर्ष के संन्यासियों की तरह-तरह की पोशाकें होती हैं । पर यह रंग सबका है ।”

“कैन यू टैल फॉरचून ?”

“नो ।”

“सिर्फ डॉक्टर हो ?”

“हाँ, और संन्यासी ।”

फिर कुछ देर बाद अफ़सर बोला, “बता सकते हो इस तरह की स्त्रियाँ तुम्हारे देश में कितनी होंगी ? स्ट्रेंज गर्ल !” फिर जैसे अपने-आप ही कहने लगा, “उससे मेरी भेंट पुरी में हुई थी । आन दि सी बीच । स्ट्रेंज गर्ल ! घण्टे-भर में ही हम लोग घनिष्ठ हो गए । अद्भुत वन्य है ! कितना हँस सकती है ! कैसा प्रचण्ड क्रोध है ! क्या शराब पीती है !” सिगरेट का एक कश खींचकर धुआँ छोड़ते हुए वह फिर बोला, “तभी से मेरे साथ मटक रही है ।” फिर बोला, “शी इज़ ए स्पोर्ट—पर बहुत ही वाइल्ड है ।”

कृष्णस्वामी ने कहा, “होश में आ रही है । तुम्हारे पास और थोड़ी-सी शराब है ? शी नीड्स—”

युवती शराब पीने के बाद मुख थोड़ा विकृत करके बोली, “वाटर-प्लीज़ ! वाटर—ठंडा पानी ।”

कृष्णस्वामी ने मुँह में पानी डाला । युवती ने फिर मुँह खोला । कृष्णस्वामी ने फिर पानी दिया । उसके बाद आँखों के नीचे उँगली रख कर हँसते हुए बोले, “लैट मी लुक ऐट योर आइज़ । लुक ऐट माई फ़ेस ।”

युवती की भीहें चढ़ गई, दृष्टि तीक्ष्णतर हो गई ।

अमरीकी अफसर ने कहा, “हे—डोण्ट—; वह सब मत करो ! इ यू हियर ?” उसके बाद कहने लगा, “अचानक ही चीख पड़ती है, मार बैठती है—हिस्टीरिया की तरह ।”

किन्तु इसी बीच युवती हड़बड़ाकर उठ बैठी । तीव्र दृष्टि और तीक्ष्ण कण्ठ से चीखकर बोली, “यू ब्लैकी—लीव मी—; छोड़ दो मुझे— काला आदमी कहीं का ।”

अफसर चिल्लाकर उठा, “शट अप यू बिच ! शट अप आई से ।”

कृष्णस्वामी ने हँसकर युवती के माथे पर हाथ फेरते हुए प्रसन्न स्वर में कहा, “तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं । मैं डॉक्टर हूँ । तुम्हें मेरी बात माननी चाहिए । और थोड़ी देर लेटी रहो, ठीक हो जाओगी । तुम्हारे सिर में पीड़ा हो रही है, मैं जानता हूँ । यह लो, गोली खा लो ! प्लीज़ ! प्लीज़ एण्ड बी स्टिल !” बैग खोलते-खोलते कविता-पाठ के स्वर में कहते गए, “पेशेन्स यू यंग रोज़-लिण्ड मेड—पेशेन्स प्लीज़—”

अफसर हँस पड़ा, “हे डॉक—यू आर ए पोएट—आँ—दैटस फाइन ।”

युवती आँखें बन्द किये लेटी हुई थी, उसके चिकने मस्तक पर कुछेक रेखाएँ जाग उठीं ।

“लो ! खा लो !”

गोली खाकर युवती उठ बैठी । “ए स्मोक प्लीज़ !” हाथ बढ़ा दिया । नेल-पालिश लगी हुई उँगलियों के पोरों पर निकोटीन के दाग थे । अफसर उत्साहपूर्वक कहने लगा, “नाउ शी इज़ ओ के । यह लो ! गैट अप माइ हनी ।”

उसके बाद कृष्णस्वामी की ओर देखकर बोला, “वह ठीक हो गई है, डॉक, ओके । अब हम लोग चलेंगे । बहुत-बहुत धन्यवाद । यह लो !”

और उसने दो दस-दस रुपए के नोट निकालकर रखे ।

कृष्णस्वामी ने कहा, “बहुत धन्यवाद । पर मुझे माफ करो ! यही तो मेरा धर्म है । क्राइस्ट के नाम पर तुमसे अनुरोध करता हूँ ।”

तीन

भुमकी ने आकर विस्मय-विस्फारित आँखों से लालसिंह और सिन्धु की ओर देखते हुए फुसफुसाकर कहा, “सिंह, बाबा साहब को क्या हुआ है ?”

लालसिंह आसमान की ओर ताकता हुआ किसी दूर गरजते हवाई-जहाज को खोज रहा था। भुमकी की बात पर उसने मुड़कर देखा, ‘क्या हुआ है ?’

“जाने क्या बड़बड़ा रहे हैं, कोई जंतर-मंतर पढ़ रहे हैं, मैंने सुना। डर के मारे भाग आई। चाय नहीं दे सकी। जाओ, तुम दे आओ ! बाबा रे !”

जंतर-मंतर की कोई बात सुनते ही भुमकी भयभीत हो उठती है। लगता है शायद उसे ही डाइन समझकर कोई मंत्र चला रहा है। दिन होने पर वह जंगल में भाग जाती है। चुपचाप झाड़ियों के भीतर बैठी रहती है, खरगोश की ही भाँति। बहुत-सा समय बीत चुकने पर भय धीरे-धीरे कम हो जाता है; तब गुनगुनाकर कुछ गाती है, उसके बाद उठ जाती है।

चाय का प्याला हाथ में लेकर लालसिंह कृष्णस्वामी के कमरे के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ। वह जानता है कि बीच-बीच में बाबा साहब बाइबिल के सरमन अपने-आप ही पढ़ने लगते हैं। वह अपने माथे और बदन पर कायदे के अनुसार हाथ लगाकर ‘आमीन’ कहता है।

सचमुच ही बाबा साहब कमरे में इधर-उधर चक्कर काट रहे हैं

और बाइबिल पढ़े जा रहे हैं। बाइबिल नहीं, कृष्णस्वामी कविता-पाठ कर रहे थे,

“It is the cause—It is the cause my soul—
Let me not name it to you, you chaste stars—
I'll is the cause.
Yet, I'll not shed her blood

Nor scar that whiter skin of her's than snow.

शेक्सपियर के ‘अथेलो’ से पाठ कर रहे हैं कृष्णस्वामी। आज राम-चरन के मकान से ही ‘अथेलो’ याद आ रहा है। उस युवती के साथ बातचीत में ‘अथेलो’ की कितनी पंक्तियों का प्रयोग किया था !

“लेट मी लुक ऐट योर आइज़। लुक ऐट माइ फ़ेस। पीस एण्ड बी स्टिल !”

ये सभी ‘अथेलो’ नाटक के संवाद हैं।

“पेशेन्स यू यंग रोज़-लिण्ड मेड—”

इसका भी बहुत-सा हिस्सा वहीं से है। ये सब बातें अमरीकी अफसर के समझने की नहीं। भोजन-शराब-नारी-नाचरंग-हथियार-अस्त्र-शस्त्र—इन्हे छोड़ ऐसी बातें समझने से युद्ध नहीं चलता। ठीक है, कुछ-कुछ ऊँचे स्तर के लोग भी हैं। शायद बहुत-से कवि भी कलम छोड़कर कमर में रिवाल्वर लटकाए राइफल कन्धे पर रखे आ गए हैं; पर वैसे कितने हैं ? कम-से-कम वे लोग इस प्रकार एक स्त्री को सिर पर उठाए नहीं घूमते। पर रीना ब्राउन भी न पहचान सकी। शब्द कानों में पहुँचे, पर स्मृति का द्वार नहीं खुला। आश्चर्य !

नहीं। आश्चर्य किस बात का ? शराब ने उसकी स्मृति को, बुद्धि को, शायद सारे अस्तित्व को, आच्छन्न कर रखा था।

चाय का प्याला रखकर लालसिंह चुपचाप बाहर चला गया। फ़ादर ईश्वर की याद कर रहे हैं।

रीना ब्राउन के लिए एक दिन ईश्वर भी तुच्छ हो गया था। यह ठाक है कि तब कालाचाँद ईश्वर को नहीं मानता था।

कालाचाँद नहीं, कृष्णोन्दु, कृष्ण इन्दु। देहाती लड़का। काला, छरहरा, लम्बा, बड़ी-बड़ी आँखें, माथे तक भरपूर घने बाल, मुख पर आँखों में ग्राम-सुलभ सरलता। देहात की कर्कशता की थोड़ी-सी मलिनता भी है, किन्तु आश्चर्यजनक सप्राणता, और बुद्धि भी वैसी ही तीक्ष्ण। देहात के प्रसिद्ध लुहार की बनाई हुई असली इस्पात की दाय के समान है; तेज धार, अनमनीय दृढ़ता, किन्तु शान-पालिश से घिसी-मँजी हुई नहीं, थोड़ी मैली।

कालाचाँद का जन्म पश्चिमी बंगाल के एक विख्यात वैद्य वंश में हुआ था। पर वह ख्याति उस समय अस्तोन्मुखी हो चुकी थी। प्रपिता-मह और उनके भी पूर्व-पुरुष प्रसिद्ध भिषगाचार्य थे। आयुर्वेद का प्रचार कम होने के साथ-साथ पिता का उत्साह भी कम हो गया था। वे आयुर्वेद के बजाय खेती-बाड़ी में और धर्म-कर्म में मन लगाते थे। अपने इकलौते बेटे को डॉक्टरी पढ़ाने की उन्हें बड़ी लालसा थी। गाँव के स्कूल में मैट्रिक पास करके कालाचाँद इण्टरमीडियेट साइन्स पढ़ने के लिए कलकत्ता के सेण्ट जेवियर्स कालेज में आया, इण्टर पास करके मेडिकल कालेज में प्रवेश करने के लिए। ज़रा-सी बात पर हा-हा करके हँसता है, धम्म-धम्म करके सीढ़ी से उतरता है; लम्बे कालाचाँद का सिर कक्षा के अस्सी फ़ीसदी लड़कों से प्रायः छः इंच ऊपर दीखता रहता है। अशुद्ध देहाती उच्चारण में निस्संकोच बात कहे जाता है। कौतूहल की तो कोई सीमा ही नहीं। दिन-रात ही प्रश्न करता रहता है—क्या ? क्या ? क्यों ? क्यों ? उसके साथ देहाती लहजे का लटका। शहरी लड़के हँसते हैं। पर कालाचाँद इस सबकी परवाह नहीं करता। वह भी हँसता है। कभी-कभी गाँव में सीखी हुई पुरानी व्यंग्य-कथाएँ सुनाकर बदला लेने की कोशिश करता है।

कहता है, “तुम लोग मुझे आम कहते हो ! तो फिर मामा को क्या

कहते हो ?”

अचानक कालाचाँद प्रसिद्ध हो गया। उस समय भी सेण्ट जेवियर्स की पुरानी ही इमारत थी। कालेज के दक्खिन की ओर बड़ा भारी खेलने का मैदान था। उस मैदान में टिफिन के समय लड़के फुट-बाल खेलते थे। सभी कलकत्ता के स्कूलों के लड़के होते थे। मुफ-स्सिल के लड़के खड़े देखते रहते थे। कम-से-कम देहात से हाल ही में आये हुए पहले वर्ष के लड़कों को तो उतरने का साहस ही न होता था। खिलाड़ियों की संख्या बाईस तक सीमित न रहती थी, उससे बढ़ ही जाती थी। कुछ दिन देखते रहने के बाद शायद डेढ़ महीने पीछे, अगस्त में, कालाचाँद बरामदे से उतरकर मैदान के पास जाकर खड़ा हो गया—गोल लाइन के पास। बूँदा-बाँदी से मैदान में फिसलन हो गई थी। खिलाड़ी गेंद में ठोकर मारने के प्रयत्न में फिसलकर कीचड़ की मछ-लियों की भाँति गिरते चले जाते थे। देखने वाले लड़के हो-हो करके हँसते थे। एक सिक्ससाइड शॉट। गोल-कीपर गेंद को ठीक जगह रखकर हट गया। फुलबैक गेंद में ठोकर मारने के लिए पैर उठाते ही फिसलकर दूर जा गिरा। पल-भर में कालाचाँद ने जूते उतारे और दौड़कर गेंद में ठोकर लगा दी। पक्के खिलाड़ी का जोरदार शॉट, गेंद ऊँची उठकर सेण्टर लाइन के पार दूसरी तरफ की हाफबैक लाइन के सामने जाकर गिरी।

“कौन है यह लड़का ? कौन है जी ?” ढूँढ़ मच गई। कालेज-टीम का कप्तान तीसरे वर्ष का आशु दास आगे बढ़ आया। “क्या नाम है ? कहाँ खेले हो ? किस स्थान पर खेलते हो ? मैच खेले हो ?”

“हाँ, बहुत मैच खेले हैं। ‘इत्ते सारे’ मैडल मिल चुके हैं। सिउड़ी, वर्धमान, कांचनतला, शांतिनिकेतन में मैच खेल चुका हूँ। पाँच बैस्ट प्लेयर्स-मैडल हैं मेरे पास। लैफ्ट आउट खेलता हूँ। कानरर किक से गेंद गोल में पहुँचा दूँगा। फुलबैक भी खेल सकता हूँ, लैफ्ट बैक, सेण्टर भी खेल चुका हूँ। गोल कर सकता हूँ। दीजिए न एक कानरर किक, करके दिखा दूँ। देते हैं ?”

“लाना तो जी गेंद । लाना जरा !”

कार्नेर किक से गेंद सचमुच गोल में चली गई । विचित्र ढंग से गेंद गोल के सामने छः गज सीमा के भीतर पहुँचकर और फिर टेढ़ी होकर एकदम कोने के पास से गोल में घुस जाती थी । यह कालाचाँद का पैर पहचान चुका था ।

कालाचाँद को लैफ्ट आउट में खेलने को कहा गया । ऊँचा-लम्बा कालाचाँद अपने लम्बे-लम्बे पैरों से गेंद लेकर दौड़ा । वह दौड़ता तीर की भाँति था । एकदम उस किनारे की लाइन के पास से गेंद मारी । ठीक गोल के सामने जाकर गिरी । अपना पैर फिसलने से गिरे भी कई एक बार । लोग हँस उठे । पर कालाचाँद ने वह सुना ही नहीं, देखा तक नहीं । अचानक एक बार नाराज होकर सेण्टर फावर्ड से कह उठा, “एक भी गोल में नहीं घुसा सके ? मुझे खेलने देंगे सेंटर में ?”

कालाचाँद ने सेण्टर फावर्ड में आते ही गेंद को पकड़कर थोड़ा ऊपर उठाया और फिर एकदम गोल-कीपर के हाथों में ही फेंका । गोल-कीपर ने गेंद को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, कालाचाँद उछलकर गेंद को सिर से मारकर गोल-कीपर के ऊपर गिर पड़ा । गिरे दोनों ही, पर गेंद गोल में चली गई ।

दूसरी बार गोल-कीपर ने उसे मार दिया । नाक से खून गिरने लगा और कमीज सन गई ।

कुछेक मिनट वह थोड़ा अचेत-सा रहा । फिर तुरन्त ही उठ खड़ा हुआ और सिर के बालों को खून तथा कीचड़ से सने हुए हाथों से हटाता हुआ मैदान में भीतर पहुँच गया । पर कप्तान दास ने उसका हाथ पकड़कर कहा, “नहीं, आप और नहीं । आपस में ही मार-पीट नहीं करते ।” कालाचाँद अद्भुत लड़का है । वह हँस पड़ा । बोला, “कैसे जाना मैं मार-पीट करूँगा ?”

हँसकर कप्तान ने कहा, “हम भी तो खेलते हैं ।”

कालाचाँद ने कहा, “यह ठीक है ।”

कालाचाँद उसी दिन कालेज में मशहूर हो गया। पर उसकी प्रसिद्धि का अन्त वहीं तक न था। कुछ दिन, शायद महीने-भर के बाद ही, बँगला भाषा के अध्यापक कक्षा में घुसते-घुसते अचानक चकित होकर थम गए। बंगाली अध्यापक साहित्य-रसिक, साहित्यिक थे। कक्षा में कोई ऊँचे स्वर से कविता-पाठ कर रहा है। सद्यःस्थिति-प्राप्त कालाचाँद ने आहत और दुर्दान्त छात्र की भाँति दो कक्षाओं के बीच अध्यापक के तख्त पर चढ़कर कविता-पाठ शुरू कर दिया है। इसके पीछे थोड़ा-सा इतिहास था। कक्षा में पहला स्थान मौलाली के किसी मुसलमान नेता के लड़के हलीम का था। वह कक्षा में बड़ी शैतानी करता था। दो घण्टों के बीच तख्त के ऊपर जाकर खड़ा हो जाता था, अध्यापकों की नकल उतारता, मनमाना बकता, खड़िया लेकर बोर्ड पर कार्टून बनाने की कोशिश करता—एक क्लाउन की भाँति। लड़के हँसते। अचानक उस दिन बँगला भाषा की कक्षा में कालाचाँद आकर खड़ा हो गया। बँगला की कक्षा में हलीम नहीं है। वह बँगला नहीं पढ़ता। कालाचाँद ने बँगला कविता-पाठ शुरू कर दिया :

आज इस प्रभात में, प्रभातविहग, कौन गीत गाया

दूर, बहुत दूर, आसमान से, स्वर जो वह आया।

उसके बाद कहने लगा, “सुनो भाइयो, बाँयेज—बाँयेज—माई फ्रेंड्स—कामरेड्स—!”

कामरेड शब्द तब तक आ चुका था। सन् उन्नीस सौ अड़तीस-उनतालीस की बात है।

“मैं कविता-पाठ कर रहा हूँ, सुनो ! रवीन्द्रनाथ की कविता ‘निर्भर का स्वप्न-भंग’।”

उसका गला अच्छा नहीं था। उसके ऊपर उम्र का भारीपन गले में हाल ही में पैदा होना शुरू हुआ था। उसकी आवाज उस समय फटी-फटी-सी, कुछ भारी-भारी-सी थी। किन्तु इस सबका उसे कुछ खयाल ही न था, वह इसकी परवाह ही नहीं करता था। हर काम में वह एक

विशेष शक्ति द्वारा अपने-आपको उँडेल सकता है—संचित जलराशि के निमग्न गतिवेग की भाँति, प्रत्येक जल-बिन्दु के शक्ति-प्रयोग की भाँति, उसके तन-मन दोनों के ही समस्त अणु-परमाणु जो काम भी वह करता, उसीमें तन्मय हो जाते थे। उसके गले का स्वर थर-थर काँपने लगा। बिजली की शक्ति की भाँति सभी श्रोताओं के मन में वह आवेग संचारित हो उठा :

“आज इस प्रभात में रवि के ये किरण-कर
कैसे आ छाये हैं प्राणों पर।”

उसके गले का स्वर ऊँचा होने लगा। आवेग मानो पुंजीभूत बादलों की भाँति आवर्तित हो चला। शुरू से आखिर तक सारी कविता का पाठ करके अन्तिम छन्द पर आ पहुँचा :

“जाने क्या हुआ आज जाग उठे प्राण
सुनता हूँ दूर महासागर का गान
और
मेरे चारों ओर
कंसा कारागार घोर—

तोड़-तोड़-तोड़ कारा प्रबल, आघात कर।”

और पंक्तियाँ समाप्त करते ही वह तख्त से नीचे उछलकर कक्षा के वन्द दरवाजे के पास जा पहुँचा और किवाड़ों में धम्म-धम्म मुक्के मारने लगा। लड़कों ने भी अपनी बैचों को पीटना शुरू कर दिया।

ठीक उसी समय अध्यापक ने कमरे में प्रवेश किया। हँसकर बोले, “दैट्स नॉट दि वे, दैट्स नॉट दि वे, माइ फ्रेण्ड्स। भरने के जल का कारागार को तोड़ने का ढंग और मानव-हृदय का रुद्ध पथ की बाधाओं को तोड़ने का ढंग एक-सा नहीं होता। पर तुम तो अच्छा कविता-पाठ करते हो कालाचाँद !”

फिर एक बार कालाचाँद की ख्याति चारों ओर फैल गई। उस बार इण्टर कालेज-कविता-पाठ-प्रतियोगिता में उसे भेजा भी गया। उसने

बँगला और संस्कृत-प्रतियोगिता में कविता-पाठ किया। पुरस्कार तो उसे नहीं मिला, पर संस्कृत-कविता-पाठ में प्रशंसा मिली। सबसे बड़ी बाधा हुई थी उसके गले के कारण, नहीं तो शायद पुरस्कार भी पा जाता। उच्चारण के लिए भी उसके अंक कम हो गए थे।

खेल के मैदान से कालेज तक, इधर नामी रेस्टोरेण्ट से लगाकर होस्टल तक कालाचाँद के कंठ-स्वर से, उसके गतिवेग से, वातावरण चंचल हो उठा। किन्तु वार्षिक परीक्षा में वह फेल हो गया। कहने लगा, किसी दूसरे कालेज में चला जाऊँगा। कालेज-टीम के कप्तान ने रैक्टर से कहकर उसे प्रमोशन दिला दिया। रैक्टर ने उसे बुलाकर कहा, “तुम्हें सावधान होना पड़ेगा कालाचाँद। तुम तो ‘डल’ लड़के नहीं हो।”

उस दिन कालाचाँद को अपने पिता और माँ की याद आई थी।

उसके पिता अल्पभाषी और गम्भीर प्रकृति के व्यक्ति थे, पूजा-उपासना में लगे रहते थे। उनके मुख पर, आँखों में, आचार-व्यवहार में ऐसी कुछ बात थी जिससे उनके पास पहुँचते ही मन उदास हो जाता था। शायद एक प्रकार का प्रच्छन्न लज्जा का पश्चात्ताप। वह लम्बी साँसें लेते रहते हैं, मुँह से कुछ कहते नहीं। केवल गृह-देवता के द्वार पर प्रणाम करते समय आस-पास कोई न होने पर कहते हैं, “मेरी अक्षमता के लिए क्षमा करो प्रभु! तुम्हारे भोग में कमी करनी पड़ती है—यह दुःख मैं तुम्हारे सिवाय और किससे कहूँ?”

उसकी माँ प्रसन्नता की मूर्ति थीं, कल्पवृक्ष थीं। उसने जब भी जो कुछ चाहा है वही उन्होंने उसके लिए जुटा दिया है। जिसकी चाह है वह अवश्य मिलेगा, यह विश्वास उसे माँ ने ही दिया है। उनके आँचल में अनन्त दूध था, हृदय में अनन्त स्नेह था और मन में अनन्त आशा थी। उनका प्रश्रय अबाध और अगाध था।

उसकी माँ ने उसे तैरना सिखाया था। वह स्वयं तैरना जानती थीं। जिस तालाब में वह स्नान करती थीं उसमें कमल खिलते थे। कालाचाँद रोज़ फूलों के लिए हठ करता, माँ तोड़कर ला देती थीं। कुछ

दिन बाद उन्होंने कहा था, “तू ही तैरना सीख, सीखकर तोड़ ला, मुझसे नहीं लाया जाता !” तैरना सीखने के डर से कई दिन तो उसने फिर कमल की बात ही नहीं उठाई थी। कुछ दिन बाद माँ स्वयं ही एक दिन पेड़ से कमर बाँधकर घड़ा तैराती हुई बोली थी, “आ, कमल तोड़ेंगे।”

वह माँ के साथ-साथ गया था। आते समय कई बार घड़ा आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कहा था, “इसे पकड़ !”

उसके बाद रोज़ वही उनको गृह-देवता की पूजा के लिए कमल ला दिया करता था।

माँ उसके पास लेटकर भविष्य के बारे में बातें किया करती थीं। “बड़ा भारी डॉक्टर बनना, विलायत जाना, जर्मनी जाना। बड़ा भारी मकान बनवाना, गाड़ी खरीदना, नौकर-चाकर रखना !”

वह ऐश्वर्य की ही बातें करती रहती थीं। बहुत ही सरल मन की थीं। उनके लिए दान-ध्यान-दया-स्वार्थ-त्याग आदि सब अपने उपभोग के बाद थे। अपने हाथों कमाकर पहले खूब खाएँगे, उसके बाद दूसरों की सोचेंगे।

वह कहता, “विलायत जाने से जाति नहीं चली जायगी ?”

“आजकल वह ज़माना नहीं रहा। और फिर जायगी तो चली जाय। जाति को लेकर क्या अपने पिताजी की भाँति धो-धोकर पियेगा ?”

“पिता जी आज्ञा नहीं देंगे।”

“तुम चले जाना ! नहीं होगा तो हम अलग रहेंगे, बृन्दावन चले जायेंगे। तू तो बड़ा हो सकेगा !”

परीक्षा में फेल होने के बाद उसे उस दिन उन्हीं लोगों की बात याद आई।

और इस स्मृति को वह फिर नहीं भूला, कम-से-कम इण्टर की परीक्षा देने तक तो नहीं भूला। उसने पहली श्रेणी में इण्टर परीक्षा

पास की ।

मेडिकल कालेज में भरती हुआ ।

यहाँ वह कालाचाँद गुप्त नहीं, कृष्णेन्दु गुप्त था । इण्टर परीक्षा के पहले ही विश्वविद्यालय में अरज़ी और अदालत में हलफ़नामा देकर उसने अपना नाम बदलवा लिया था ।

सेण्ट जेवियर्स के फ़ादर रेक्टर उसकी पढ़ने-लिखने में उन्नति देखकर उससे खुश ही थे ।

उन्होंने हँसकर कहा था, “ह्वाट्स इन ए नेम—कालाचाँद ?”

कालाचाँद ने हँसकर उत्तर दिया, “कालाचाँद इज़ ब्लैक मून, एण्ड कृष्णेन्दु मीन्स दि सेम—दि ब्लैक मून । आई हैव चेन्ज्ड दि वर्ड अनोन्ली, नॉट दि मीनिंग । आई एम दि सेम ओल्ड ब्लैक मून, फ़ादर ।”

पिता को, माँ को भी पत्र में यही लिखा था ।

पिताजी ने कोई उत्तर न दिया था, माँ ने लिखा था, “ठीक किया ! इसमें हमें कोई एतराज़ नहीं ।”

पर तब तक उसका कालाचाँद नाम भी कालेज-कालेज में स्वयं उसकी ही भाँति प्रसिद्ध हो चुका था । उसने इससे हिम्मत न हारी । किसी के कालाचाँद कहकर पुकारते ही वह कहता, “नॉट कालाचाँद—आई एम कृष्णेन्दु—कॉल मी कृष्णेन्दु प्लीज़ !”

रीना ब्राउन के साथ परिचय यहीं हुआ—वह भी उसी कालाचाँद नाम को लेकर । रीना ब्राउन कालेज की चीफ़ नर्स मेट्रन पॉली ब्राउन की सौतेली लड़की थी—पॉली के पति जिमी ब्राउन की पहली पत्नी की लड़की ।

कालेज के स्टाफ़-क्वार्टर में मिसेज़ ब्राउन रहती थीं । रीना की उम्र उस समय १५-१६ की होगी । दीर्घांगी लड़की उस समय किशोरी ही थी, पर तभी से अपूर्व मोहिनी । शरीर का रंग गोरा होने पर भी बंगाल की श्यामलिमा का एक हल्का-सा आभास उस पर स्पष्ट था । सबसे अधिक आकर्षक थे लड़की के केश । छोटे-से कपाल को ढँकती हुई ऐसी

भरपूर घनी काली केश-राशि कम ही दिखाई देती है। तेलहीन रूखेपन में भी उसकी श्यामल शोभा फीकी न पड़ती थी, धुंधलेपन का आभास नहीं होता था। मानो माथे के ऊपर घने काले केश-संभार के साथ इस लाल मिट्टी के प्रदेश के सघन शाल-वनों की शोभा का कोई सम्बन्ध हो। कृष्ण-कुंतला के बजाय अरण्यकुंतला ही मानो उसकी अधिक उपयुक्त और शोभन उपमा हो। वैसी ही काली-काली दो भौहें—माथे के बीच से लगाकर मानो कान तक खिंची हुई, कच्चे बांस के मोटे धनुष की भाँति उसीके अनुरूप दो सुन्दर आँखें—उसकी पलकों के घने काले रोंगों ने उन्हें और भी सुन्दर बना दिया है। फूल की केसर की भाँति दीर्घ। लगता है मानो पलकों में काजल-रेखा और स्वप्निलता लेकर ही लड़की ने जन्म लिया हो। रीना एक निर्दिष्ट समय पर अपने फ्लैट के बरामदे में दिखाई पड़ती है। तभी उस जमाने के सैनिक मैडिकल विद्यार्थियों में से द्वितीय वर्ष के छात्र कक्षा से निकलते थे—उसके ठीक कुछ ही देर बाद, शायद दस मिनट बाद। सैनिक छात्र प्रायः सभी बाहर चले जाते थे, रह जाता सिर्फ जॉन क्लेटन, सैनिक छात्रों का सैण्टर-हाफ़। जॉनी मार-पीट में सिद्धहस्त गुण्डा था।

जॉन क्लेटन युद्ध-विभाग के विख्यात आई० एम० एस० अफ़सर का बेटा था। वह ज़िद्दी अफ़सर बेढब शराबी, विख्यात शिकारी, नाचने में प्रवीण और मार-पीट में निपुण व्यक्ति था। लोग कहते हैं जहाँ चार्ल्स क्लेटन होता उस छावनी के अफ़सर संत्रस्त रहते थे। भयंकर तूफ़ान की भाँति दूसरों की घर-गृहस्थी उजाड़ने में ही उसे आनंद आता था। उसकी यह ढिठाई स्त्रियों के लिए बड़ी आकर्षण की वस्तु थी। इसी आकर्षण ने एक दिन पॉली ब्राउन—उस समय मिस पॉली मॉरीसन—को भी घेर लिया था। पर उस समय क्लेटन का विवाह हो चुका था। पत्नी इंग्लैंड में थी, जॉन अभी बालक ही था। पॉली मॉरीसन ने दूटे हुए दिल से सैनिक विभाग का काम छोड़कर कलकत्ता आकर मैडिकल कालेज में नौकरी कर ली थी। क्लेटन साहब ढीठ होकर भी ढोंगी न था। कलकत्ता में

नौकरी दिलाने में उसने सहायता की थी। कई-एक बड़े-बड़े अस्पताल केवल योरपवासियों के लिए निर्दिष्ट थे—उनका चक्कर काटने के बाद पॉली ने मैडिकल कालेज में नौकरी ले ली थी। वह उस समय भी मिस पॉली थी। यहीं रहकर वह मिसेज़ ब्राउन हुई है। रीना उस समय १० वर्ष की बालिका थी। जेम्स और रीना के साथ घर-गृहस्थी में डूबकर पॉली ब्राउन क्लेटन को करीब-करीब बिलकुल भूल चुकी थी।

अचानक पिछले वर्ष जॉन क्लेटन आकर मैडिकल कालेज में भरती हुआ। मिसेज़ पॉली ब्राउन को एक चिट्ठी देते हुए उसने कहा था, “मेजर चार्ल्स ब्राउन आफ़ दि किंग्स ओन रेजिमेंट, आपको उनकी याद है ?”

“मेजर चार्ल्स क्लेटन, डियर चार्ली ?”

जॉन ने हँसकर कहा था, “मैं उनका लड़का हूँ।”

“तुम उनके लड़के हो ?”

“हाँ, यहाँ मैडिकल कालेज में पढ़ने आया हूँ।”

विस्मित हो गई थी पॉली ब्राउन। मेजर चार्ल्स क्लेटन का लड़का इंग्लैंड के बजाय यहाँ डॉक्टरी पढ़ेगा ? आई० एम० डी० होगा ? चार वर्ष में चिकित्सा-शास्त्र समाप्त ! उस्तरा चलाकर इस देश के नीम हकीम फोड़ा काटते हैं। वे लोग मोथरी छुरी से भी उससे बेहतर नहीं काट सकते। आई० एम० डी० के उपयोग के लिए पैनी छुरी के बजाय मोथरी छुरी की ही व्यवस्था है। उन्हें कभी भी ब्रिटिश-आइरिश रेजिमेंट में नौकरी न मिलेगी। काले सिपाहियों की रेजिमेंट में मैडिकल अफसर होगा।

पॉली ब्राउन के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं, पर चिट्ठी पढ़कर पॉली ब्राउन ने अपने-आप ही कहा था, “स्ट्रेंज ! स्ट्रेंज लक ! लक के सिवा और क्या कहूँ !”

मेजर क्लेटन के जीवन में उलट-पलट हो गई है। विचित्र अदृष्ट के सिवाय और क्या ! पाँच वर्ष पहले की बात है। क्लेटन सी० पी० में

बड़ी छावनी में था। तब तक उसके बाल-बच्चे यहाँ आ चुके थे। क्लेटन भी कैप्टन से मेजर हो चुका था। पत्नी के आने से अफसरों की मंडली में उसे लाचार होकर फूँक-फूँककर कदम रखना पड़ता था। क्लेटन की पत्नी मार्गरेट दृढ़ स्वभाव की स्त्री थी—साहस और शारीरिक शक्ति दोनों में ही क्लेटन के उपयुक्त। क्लेटन ने समाज छोड़कर मध्य भारत के जंगलों में घूमना शुरू कर दिया, शिकार की खोज में। शिकार के लिए जंगलों में भटकते-भटकते आदिवासी स्त्रियों के उपभोग का रास्ता निकाल लिया था उसने। कुछ ही दिन में मार्गरेट को भी इसका आभास हुआ। वह भी एक राइफल लेकर शिकार में उसकी संगिनी बन गई। अंतिम बार एक विचित्र घटना घटी।

क्लेटन-जैसे व्यक्ति किसी बात को धुमा-फिराकर नहीं कहते—सत्य के प्रति श्रद्धा के कारण नहीं, जिन्दगी की कोई घटना ही उसके लिए लज्जा का विषय नहीं होती इसलिए। उसने पॉली ब्राउन को लिखा था, “पॉली, विचित्र घटना हुई। मेरे मन ने मुझे धोखा दिया या वह कोई नियति का खेल था, या मेरे कर्म-फल की परिणति थी, यह आज भी नहीं समझ पाया। उस बार एक घने जंगल के बीच एक गाँव में अड्डा बनाया था। मार्गरेट साथ थी। एक बाघ के जोड़े का अड्डा भी पास ही था। गाँव में आकर एक आश्चर्यजनक जंगली युवती को देखा। मेरा मन बाघ के बजाय उसकी ओर ही अधिक खिंच गया, पर मार्गरेट साथ थी। जो हो, मचान बाँधकर दूसरे दिन रात को एक बाघ को मारा, पर एक भाग गया। जो मरा वह बाघ था, भागने वाली थी बाघिनी। तीन दिन फिर उसको न पा सका, पर उसके पैरों के निशान विचित्र रूप में चारों तरफ दीखते रहे, मानो सामने न आकर पीछे की ओर से चक्कर काट रही हो। गाँव के सरदार ने कहा था, “लौट जाइए साहब, यह बाघिनी भयंकर है। आपके पीछे पड़ गई है।” बात दिन के समय हो रही थी। गाँव के और लोग भी इकट्ठे थे। उन्हींके बीच वह विचित्र मादकतामयी जंगली युवती भी थी। सबकी नज़र बचाकर वह मंद-मंद मुस्करा रही थी।

तुम उस ज़माने के चार्ली को भूली न होगी। इस मामले में वह पक्का उस्ताद था। कोई बाघिनी पीछे पड़ी है, केवल इस कारण चार्ल्स क्लेटन उस जंगली मदिरा का पान किये बिना लौट सकता था? मार्गरेट ठीक समझ न पाई थी, फिर भी उसने कहा था, 'लौट चलो'। मैंने कहा, 'आज का दिन और देख लें।' ठीक उसी समय बाघिनी गाँव के बाहर प्रकट होकर एक गर्जन द्वारा मुझे नियति का निमंत्रण देकर जंगल में अदृश्य हो गई। शाम को अचानक उस स्त्री से भेंट हो गई। उसने भी हँसकर निमंत्रण दिया। मैंने उससे कहा, 'आज शिकार के लिए नहीं जाऊँगा, आधी रात को मिलूँगा।' मार्गरेट से कहा, 'तबीयत ठीक नहीं है, मचान पर जाना आज ठीक नहीं होगा।' डेरे पर ही रह गए। डेरा मुखिया के घर के ही एक कमरे में था। मैंने शराब पी और मार्गरेट को भी पिलाई। उसे सुलाना जरूरी था और वह सो भी गई थी। अचानक खट-खट आवाज़ हुई। कान लगाकर सुनने लगा। मैं शिकारी हूँ, जानवरों के पैरों की आहट पहचानता हूँ। मैं चार्ली क्लेटन हूँ, अभिसारिका के पैरों की चाप भी पहचानता हूँ। वह पैरों की आहट उसी जंगली युवती की थी। संतोष के साथ दरवाज़ा खोला, थोड़ा-सा किवाड़ हटाकर बाहर भाँका। आसमान में चाँद था। जंगल में चाँदनी फैली हुई थी। कैसी अपूर्व थी वह चाँदनी! गहरे हरे रंग के घेरे के बीच उस शुभ्रता की कोई उपमा नहीं मिलती। उसीके बीच दीख पड़ी वह युवती। देखने में मुझसे कोई भूल नहीं हुई थी। हृदय के भीतर रक्त उबल उठा। मैं बाहर निकल आया। सीटी बजाई। वह स्थिर खड़ी थी। पर मैं आगे बढ़ गया। पर कौन कहाँ? ठीक उसी क्षण बाघ की दहाड़ से जंगल थर्रा उठा। पीछे से बाघिनी मेरे ऊपर उछल आई। मैं थोड़ा-सा खिसक सका था, तो भी वह मेरे दायें कंधे के ऊपर आकर गिरी। उसी क्षण मैंने सुनी मार्गरेट की चीख। उसीके दूसरे ही क्षण बंदूक की आवाज़ सुनाई दी—एक-एक कर दो गोलियाँ। फिर बाघ की दहाड़। उसके बाद कुछ याद नहीं, होश आया बहुत दिनों बाद अस्पताल में। दाँया हाथ काट डालना पड़ा

है; दाँया कान भी नहीं है। दाँयें पैर में फ्रैक्चर हुआ था उसमें में भी जान नहीं है। बाघिनी मार्गरेट के टुकड़े-टुकड़े करके ही मरी थी। दोनों ही गोलियाँ उसके सीने में और पेट में लगी थीं। मरते समय लुढ़कते-लुढ़कते आकर मेरे ऊपर ही गिरी थी। आर्लिगन कर लिया था। और भी मजेदार बात क्या हुई, जानती हो ? उस जंगली गाँव में उस लड़की का पता कोई मुझे न दे सका था। मैंने तलाश की थी। उन लोगों का कहना था, 'नहीं तो, ऐसी तो कोई स्त्री इस गाँव में नहीं है !' आज भी मैं क्या सोचता हूँ, जानती हो ? वह युवती क्या शुरू से ही मेरे मद्य-विह्वल मस्तिष्क और नारी-लोलुप चित्त की भ्रांति थी ? नितांत कल्पना थी ? जो हो, आज मैं विकलांग असहाय हूँ, मामूली पेंशन के ऊपर निर्भर मामूली आदमी। जॉनी को इंग्लैंड भेजकर पढ़ाने की सामर्थ्य नहीं। वह कलकत्ता पढ़ने जा रहा है। मैं जानता हूँ तुम वहाँ की मेट्रन हो। जॉनी की देख-भाल करना।"

ईश्वर का नाम लेकर पॉली ब्राउन ने शरीर पर क्रास का चिह्न बनाया था। "हे भगवान् ! पुअर चार्ली शैतान के चंगुल में फँस गया था। पर तुम बैठो, जॉनी। तुम मेजर चार्ल्स क्लेटन के लड़के हो। मेजर क्लेटन किसी समय मेरे बाँस थे, मित्र थे। मेरे घर का दरवाजा तुम्हारे लिए सदा खुला रहेगा, जब चाहो आ सकते हो।"

उसने अपने पति जेम्स ब्राउन के साथ भी जॉन का परिचय करा दिया था। जेम्स ब्राउन किसी ज़माने में मेदिनीपुर इलाके में रहता था। उसके पिता मेदिनीपुर में ब्रिटिश जमींदारी कम्पनी में थे। वहीं पहाड़, जंगल खरीदकर व्यापार करते थे। वही व्यापार जेम्स ब्राउन भी करता था। व्यापार में नुकसान होने के बाद वह इन्सॉल्वेंसी लेकर अपनी पुत्री रीना के साथ कलकत्ता आ गया था। उसीके बाद पॉली मॉरीसन से मुलाकात हुई। इस बात को आज कोई चार वर्ष हो गए।

"रीना बड़ी अच्छी लड़की है।"

दो बेगियाँ हिलाती हुई रीना बैठी-बैठी मधुर हँसी हँस दी थी।

“इसके पिता ने तय किया था कि इसे कन्वेंट में रखकर अंत में ‘नन’ बनाएँगे। जिमी को भी धर्म-कर्म का बड़ा खब्त है। इसे कन्वेंट में रखना भी था। मैं ही वहाँ से जबरदस्ती ले आई हूँ। देखो न, कैसा सलोना स्वभाव है, कैसा सलोना चेहरा है।”

उसी सलोने स्वभाव वाली रीना ने चिढ़कर कृष्णेन्दु से कहा था, “यू ब्लैकी कालाचाँड ! यू हीदेन !”

कृष्णेन्दु सिर पर पट्टी बाँधे विजयी वीर की भाँति कालेज के खेल के मैदान में अभी-अभी आया था और लड़के उल्लास तथा उत्साह से शोर मचाते हुए उसका स्वागत कर रहे थे। रीना ब्राउन क्रोध में उबलती हुई अपने फ्लैट से उतरकर ग्राउण्ड के भीतर थोड़ा-सा प्रवेश करके चीखकर बोली थी, “यू ब्लैकी कालाचाँड ! यू हीदेन !”.

उसके पीछे-पीछे आई थी उसकी आया। इसी देश की गोरे रंग की एक स्त्री। सिर के बाल पक गए थे; मोटी-मोटी भौंहें थीं; देखने में वह बहुत अजीब लगती थी। उसकी आँखों की दृष्टि तो अद्भुत थी—सदा ही मानो आतंक से खुली रहती थीं, पलक नहीं गिरती थी। वह पीछे से चिल्ला रही थी—“रीना, रीना, रीना, रीना ! नहीं ! नहीं !”

रीना चुप नहीं हुई थी। उसने पैर पटककर कहा था, “यू, सुनाई नहीं पड़ रहा है तुम्हें ?”

कालाचाँद ने उसके पास आकर कहा था, “बरसात के इस कीचड़ के ऊपर इस तरह पैर न पटको। तुम्हारा ऐसा अच्छा स्कर्ट कीचड़ की छींटों से भर गया।”

सचमुच यही हुआ था। लड़के हँस पड़े थे। उस हँसी के प्रच्छन्न व्यंग्य से रीना का मुख लाल हो गया था। इस बात का कोई जवाब भी उसे न सूझा था। खुल्लम-खुल्ला इलजाम लगाते हुए उसने कहा था, “जॉनी को तुमने इस तरह क्यों मारा ? ह्वाई ? यू ब्रूट !”

उसके उत्तर देने के पहले ही कालेज-टीम का फुलबैक बसन्त बोल उठा था, “इसके सिर की पट्टी नहीं दीखती ? जॉनी ने ही मारा था

पहले ।”

कृष्णेन्दु ने कहा था, “मेरी कोई वाग्दत्ता नहीं है मिस ब्राउन, होती भी तो वह आकर जाँनी से ऐसा प्रश्न नहीं करती। वह समझ लेती कि लड़ाई शुरू होने पर जोरदार व्यक्ति की मार भी जोरदार ही होगी। कीचक हमेशा ही भीम के हाथों मरता है।”

लड़के ‘हो-हो’ करके हँस पड़े थे।

अचानक उस आया ने हाथ जोड़कर कृष्णेन्दु से शुद्ध बंगला भाषा में कहा था, “हे बाबा ! दुहाई तुम्हारे पुरुषों की, तुम तो भले आदमी के लड़के हो, मैं हाथ जोड़ती हूँ; हार मानती हूँ। उससे कुछ न कहो। ए बाबा !”

स्त्री बंगालिन है ! इसी आश्चर्य से सब लड़के स्तब्ध हो गए थे। इसी बीच रीना जल्दी से चली गई थी। जाते-जाते चीखकर उसने कहा था, “यू विल बि पनिश्ड, गॉड विल पनिश यू !”

कालेज के भीतर वाले मैदान में खेलने के अधिकार को लेकर साधारण और एंग्लो-इंडियन सैनिक छात्रों के बीच भगड़ा, मार-पीट, कालेज के इतिहास में लिखा है। उसका काँटा तब तक निकला न था। उसकी खटक खेल के मैदान में भी चलती है। कल दो दिलों के मैच में जाँनी ने ही मार-पीट शुरू की थी। उन्हें हमेशा से ही बूट पहने रहने की सुविधा रहती है; फिर जाँनी मार-पीट में सिद्धहस्त। बेचारा जाँनी, कृष्णेन्दु को जानता न था; पर कृष्णेन्दु का छः फुट लम्बा आकार देखकर उसे थोड़ा होशियार हो जाना चाहिए था। इसके अतिरिक्त पिछले दो वर्षों में कालाचाँद का खेल में जैसा नाम था उसका ध्यान करके मारने के पहले भलीभाँति सोच-विचार कर लेना उचित था। शुरू में ही सेण्टर-हाफ़। जाँनी ने बूट की ठोकर से इन लोगों के सेन्टर-फ़ारवर्ड को घायल कर दिया था। बेचारे के दाहिने घुटने के नीचे जरूम हो गया था। उठ खड़ा होने पर भी उसकी दौड़ने की शक्ति जाती रही थी। उसके बाद ही जाँनी ने इन लोगों के सेण्टर-हाफ़ के पैर का अँगूठा कुचल दिया।

रैफरी ने उसे चेतावनी भी दी; पर जाँनी ने दूर हटकर रैफरी को 'सन ऑफ़ ए बिच' गाली दी थी। बात कृष्णेन्दु के कानों में पड़ी। सेण्टर-फ़ारवर्ड को अपनी जगह देकर वह वहाँ आ गया। आकर जाँनी के ठीक सामने खड़ा हुआ।

जाँनी ने हँसकर कहा, "कालाचाँड, दैट्स आलराइट।"

बात पूरी होते-न-होते गेंद दोनों के बीच आ पड़ी। जाँनी ने उसके घुटने को निशाना बनाकर बूट चलाया। कालाचाँद ने चतुराई से अपने घुटने बचाकर जाँनी के उठे हुए पैर के नीचे की ओर किक जमाया। छः फुट लम्बे इंसान के मजबूत बाँस-जैसे पैर के किक से जाँनी चित जा पड़ा।

थोड़ी ही देर बाद जाँनी ने उसके सिर का निशाना लगाया। सिर फट गया। खून-सने बड़े-बड़े बालों को पीछे की ओर झटककर कृष्णेन्दु कोई दो मिनट के भीतर ही गेंद लेने के लिए झपटा। जाँनी तेज़ी से लपककर उसे रोकने पहुँचा कृष्णेन्दु तब तक गेंद इन्समैन को देकर आगे बढ़ गया था। ऊँची गेंद आकर गिरी। जाँनी और कृष्णेन्दु आमने-सामने थे, दोनों ही हैड देने के लिए उछले। कृष्णेन्दु ने हैड दिया, जाँनी तिरछा होकर चीखता हुआ धरती पर गिर पड़ा, पेट को दबाये हुए। उसके बाद बेहोश। उसे उठाकर ले जाना पड़ा था। आज भी अस्पताल में है। पेट की अंतड़ियों में चोट लगी है। उसके बाद कृष्णेन्दु ने हैटट्रिक की थी।

रीना ब्राउन इसी कारण उससे कह गई, "गॉड विल पनिश यू।"

कृष्णेन्दु ने भी उत्तर दिया था। यद्यपि उत्तर देने में उस आया के मुख से अनुनयपूर्ण बँगला भाषा सुनने के कारण कुछ देरी हो गई थी। विस्मय से आधा मिनट चुप रह गया था। फिर चीखकर कहा था, "हलो मिस, हलो ! देन आस्क योर गॉड—। अपने भगवान् से कहो, मेरे सामने प्रकट हों, या मुझे अपने सामने हाज़िर करायें। जानती हो, मैं ईश्वर में विश्वास नहीं करता। मेरा एक बड़ा लाभ होगा, उन्हें देख सकूँगा।

इसके लिए अगर जरूरत हो तो बताना, तुम्हारे जानी को फिर पीट दूँगा !”

“रीना ब्राउन ! तुम्हारे ईश्वर को मैं देख चुका हूँ, रीना ब्राउन ! पर आश्चर्य है, डाइन होने की अपराधिनी इस आदिम रूप नारी भुमकी में भी उन्हें देखा है ! सिन्धु, लालसिंग आदि के भीतर भी उन्हें पाया है । तुम्हारे साथी, मृत्यु-भय-व्रस्त, मद्य-पान-विभोर, उस अमरीकी अफसर के भीतर भी देखा, वह मौजूद हैं । युद्ध में प्राण लेने वाले के भीतर नहीं, जो युद्ध में जान देने के लिए इतनी दूर आया है, उसके भीतर उन्हें देखा ! पर तुम्हारे भीतर नहीं देखा, रीना ब्राउन !”

“बाबा साहब !” कमरे में सिन्धु ने प्रवेश किया ।

“कौन ? सिन्धु ?”

“हाँ बाबा साहब । चाय दे गई थी, पी नहीं । रात कितनी हो गई है ! भूख क्या आपको नहीं लगती, बाबा साहब ?”

“मेरी रोटी ढककर रख देना, सिन्धु ! जब जी करेगा खा लूँगा !”

“ऊँह ! आप खा लीजिए, तब मैं जाऊँगी ।”

“नहीं सिन्धु ! आज मुझे छोड़ दे, बेटी ।”

“तबियत ठीक नहीं है, बाबा ?”

“तबियत तो ठीक है बेटी, मन ठीक नहीं ।” कहकर कृष्णस्वामी उठ पड़े । कमरे से निकलकर बरामदे में आ खड़े हुए । बरामदे से खुले मैदान में उतर आए ।

चारों ओर वर्षा ऋतु के घने काले शाल-वन में चाँदनी की आभा फूट उठी है । दूर क्षितिज तक जंगल के ऊपर-ही-ऊपर चली गई है । निःशब्द नहीं, निस्तब्ध भी नहीं, पर मानो केवल अवसन्न हो । पेड़-पेड़ पर कलियाँ परिपुष्ट हो रही हैं । कल सबेरे खिल जायँगी । परसों जो खिलेंगी वे आज बढ़ रही हैं । जो आज सबेरे खिली थीं, उनकी गन्ध अभी तक

हवा में बिखरी हुई है। धरती के सघन अन्धकार में जड़ें कीड़ों की भाँति लाखों सूक्ष्म मुख फैलाए जीवन-रस पी रही हैं। विचित्र जीवन-तपस्या अविराम चल रही है। कीचड़ का रस फूल के रूप में खिलता है।

रीना ब्राउन शायद शराब पिये नाचती होगी, या चीखती होगी, या शायद अमरीकी अफसर के साथ विकृत लालसा से उन्मत्त व्यभिचार में अपने-आपको नष्ट करती होगी। भौतिक जगत् में एक विस्फोट हुआ, जिसे वैज्ञानिकों ने आकस्मिक घटना बताया। उसीसे ही जीव उत्पन्न हुआ था। उस जीवोत्पत्ति में ही ईश्वर की तपस्या का होम-कुण्ड जलता है। उसमें अनन्त प्राणों की समिधाओं की आहुति पड़ रही है। प्राण अग्नि बना। तुम उसमें अंगार बनकर भर पड़ों, रीना ब्राउन ! यह कैसे हुआ ?

आगे बढ़ चले कृष्णस्वामी। अपने आश्रम की सीमा पार करके जंगल की ओर चल पड़े। जंगल में वृक्ष मानो बात कर रहे थे। हवा से पत्ते-पत्ते में कुछ जाग उठा है, कोई राग बज उठा है। सारा दिन उन्होंने मनुष्य का, जीव-जन्तुओं का जीवन-खाद्य ऑक्सीजन प्राप्त किया है। अब ऑक्सीजन दे रहे हैं। तुम दिन-रात कार्बन डायोक्साइड ग्रहण करते हो, दिन-रात कार्बन डायोक्साइड ही देते हो। उनके विलय में भी एक विचित्र सूक्ष्म स्थिति विद्यमान है, पर तुम्हारे भीतर केवल क्षय है, केवल क्षय, केवल क्षय !

“बाबा साहब ! फ़ादर !”

बँगले की तरफ से किसी का कण्ठ-स्वर बह आया। जोसेफ लाल-सिंग पुकार रहा है। वह जंगल की ओर चले जा रहे हैं इसीसे शंकित हो उठा है। जंगल में भालू हैं, जंगली सुअर हैं, बीच-बीच में चीते भी आ जाते हैं। इसी डर से उन्हें लौट आने को कह रहा है। धूमकर खड़े होकर भारी गले से कृष्णस्वामी ने कहा, “बहुत भीतर मैं नहीं जाऊँगा, जोसेफ ।”

“नहीं, बाबा साहब, गाँव से कुछ लोग आये हैं, फ़ादर !”

लोग ! इसका मतलब है किसी के घर कोई बीमारी या मुसीबत आ पड़ी है। लौट आए कृष्णस्वामी। लोग बरामदे में बैठे हैं, एक कोस दूर के एक छोटे-से गाँव से आये हैं। कृष्णस्वामी सभी से परिचित हैं—वह है बूढ़ा शरण नायक !

“क्या हुआ नायक ? इतनी रात को ?”

“होगा क्या ? मुसीबत ! नहीं तो तुम्हारे पास आता ही क्यों इतनी रात गये ?”

“कौन बीमार है ? मुझे तो कुछ पता नहीं।”

“जानोगे कैसे ? मेरे लड़के की बड़ी बिटिया। पहला जापा है। दोपहर से ही दर्द उठ रहे हैं। दाई ने इतनी रात गये कहा, ‘मेरे बस का काम नहीं नायक। हालत सचमुच खराब लग रही है; तुम बाबा साहब को खबर दो।’ लड़की दर्द से तड़प रही है। सुना नहीं जाता। एक बार चलना ही पड़ेगा बाबा को।”

“जरूर चलना पड़ेगा।” कृष्णस्वामी जल्दी से उठकर कमरे के भीतर गये। पुकारा, “जोसेफ ! तुम भी चलो। सब औज़ार लेकर बैग में ठीक से लगा लो। तुम लोग कोई लालटेन नहीं लाये, नायक ?”

“नहीं बाबा, तेल कहाँ है ! एक टूटी-फूटी हरीकेन है—वह घर में रखी है। पर चाँदनी खिली है, चलेंगे।”

“अपनी एक हरीकेन ले लो लालसिंग। ब्लैसेड इज़ ही दैट कमेच इन दि नेम ऑफ दि लॉर्ड। चलो नायक !” छोड़ो रीना की बात। रीना मर चुकी। उनके लिए तो वह मर ही चुकी।

चार

“वो अनटु यू,” रीना ने उन्हें एक दिन लिखा था। वही उसकी अन्तिम चिट्ठी थी। “कृष्णेन्दु, तुम मेरे लिए मर चुके। डेड टु मी।”

अगले दिन सवेरे कृष्णस्वामी शरण नायक के घर से लौटे। प्रायः सारी रात परिश्रम करके शरण की नातिन का प्रसव कराकर घर लौट रहे थे। शाल-वन में अभी भी रात को विचरने वालों का आना-जाना बन्द नहीं हुआ था। पक्षियों ने अभी बसेरा नहीं छोड़ा था, अभी चह-चहाना शुरू किया था। फूल भी बस खिल ही रहे थे। सिर के ऊपर आसमान में बगुलों की पंक्तियाँ उड़ी चली जा रही थीं। विष्णुपुर के बाँध पर जा रहे हैं, और एक साथ बहुत-से हंस चक्कर काट रहे हैं। सुबह की हवा थके हुए शरीर में बहुत अच्छी लग रही है। साइकल होती तो बड़ा अच्छा होता। लौटते-लौटते यही बात याद आई। कल रात को ही याद आई थी। पर अब तक दबी रही, किसी अन्य विचार के लिए अवकाश ही न था।

अन्ततः कृष्णेन्दु रीना को प्यार करने लगा था। रीना भी उसे प्यार करने लगी थी। विचित्र ढंग से दोनों के विरोध के बीच सेतु तैयार हो गया था। सोचने पर आज भी कितना आश्चर्य होता है। रीना उसे देखते ही बरामदे से चिल्लाकर कहती, “यू हीदेन !”

कृष्णेन्दु तब धर्म-ईश्वर कुछ भी नहीं मानता था, यही हीदेनज्म था। मेटर और माइण्ड की संज्ञा को मानकर उसने नई यात्रा शुरू की थी। पर हीदेन कहलाना उसे अखरता था। उस लड़की से बदला लेने की तीव्र इच्छा

उसके मन में विक्षुब्ध आवेग से चक्कर काटती रहती थी और मामूली-से अवसर पर विचित्र रूप में प्रकट हो जाती थी। कोई महीने-भर बाद की बात होगी। सितम्बर के अन्त में, मेडिकल कालेज में इनकी टीम एक कॉलेज कम्पिटेशन का सबसे बड़ा शील्ड जीतकर लाई थी। उस बार के खेल में कृष्णेन्दु ही सबसे अच्छा खिलाड़ी माना गया था। मैट्रन पॉली ब्राउन को खेल देखने का बहुत शौक था। कालेज की टीम का खेल होने पर वह जरूर जाती और अपना प्रिय पंखा हाथ में लेकर ठीक सामने की कुरसी पर ही बैठती। पास होती रीना। कृष्णेन्दु मानो रीना से बदला लेने के लिए ही पागलों की भाँति अदम्य उत्साह के साथ खेलता। रीना को सचमुच ही क्रोध होने लगता। 'कृष्णेन्दु को हीदेन कहने का हठ उसका बढ़ता ही गया। जीता हुआ शील्ड जिस दिन कालेज में आया उस दिन लड़के कृष्णेन्दु को कंधे पर उठाये नाच रहे थे। रीना बरामदे में निकलकर आई। अचानक कृष्णेन्दु को क्या सूझा कि रीना के हीदेन कहने के पहले ही वह चिल्ला उठा, "जै काली !" तभी विचित्र घटना हो गई। रीना झपटकर कमरे में चली गई।

उसके बाद रीना को देखते ही कृष्णेन्दु चिल्लाकर कहता, "जै काली !"

रीना भी कहती, "हीदेन !" पहले दिन अप्रतिभ होकर कमरे में चले जाने के बाद अब और अप्रतिभ नहीं होती रीना।

कुछेक महीने बाद बड़े दिन पर सैनिक छात्रों का सोशल फंक्शन हुआ। उसमें कुछ चुने हुए दृश्य भी दिखाए गए थे। एक दृश्य था 'ऑथेलो' से। ऑथेलो और डेसडिमोना। "इट इज दि कॉज, इट इज दि कॉज माई सोल" से लगाकर डेसडिमोना की हत्या तक का दृश्य। जॉन क्लेटन ने ऑथेलो का पार्ट किया था और अधिकारियों की अनुमति लेकर रीना ने डेसडिमोना का। क्लेटन द्वारा ऑथेलो का अभिनय अच्छा नहीं हुआ, पर अपने चेहरे और मीठे गले के कारण, खास तौर पर सहज अभिनय के लिए, रीना की प्रशंसा हुई थी। कृष्णेन्दु ने देखा था वह

अभिनय । उसके बाद उसे क्या सूझा कि ऑथेलो नाटक के उस दृश्य को उसने कंठस्थ कर लिया और चाहे जब “इट इज दि कॉज़, इट इज दि कॉज़” कहकर वह स्वगत-भाषण बोलना आरम्भ कर देता । रीना ने चिढ़कर तब से कृष्णेन्दु के सामने निकलना छोड़ दिया । तो भी कृष्णेन्दु खाली बरामदे की ओर देखकर ऊँचे गले से कहता, “इट इज दि कॉज़, इट इज दि कॉज़ ।”

इसके बाद सब उलट-पुलट हो गया—नाटकीय रूप में नहीं, अत्यन्त सहज ढंग से, स्वच्छन्द गति से । पहले उस परिवर्तन के समय कृष्णेन्दु को अवश्य ही कुछ विस्मय हुआ था । पर आज...? जंगली रास्ते पर चलते-चलते कृष्णेन्दु के मुख पर प्रसन्न-म्लान हँसी खिल उठी । किस बात का विस्मय ? क्या कारण था विस्मय का ? मनुष्य के भीतर प्राण-तत्त्व का यही तो स्वभाव है । यही तो मानव-देह की वेदी पर ईश्वर की तपस्या है । गुण के क्षेत्र में एक की दूसरे के साथ होड़ जिस भाँति मनुष्य का स्वभाव है, होड़ के बाद गुणग्राह्यता भी उसी प्रकार प्रकृति-धर्म है ।

अगले वर्ष फुटबाल का सीज़न आया । इण्टर-यूनिवर्सिटी शील्ड कम्पिटिशन में मेडिकल कालेज की टीम के जाने की बात ठीक हुई—आई० एम० डी० और एम० बी० क्लास के लड़कों की एक मिली-जुली टीम । क्लेटन और कृष्णेन्दु दोनों ही चुने गए । चुने जाने के बाद ही दोनों का सीढ़ी के ऊपर आमना-सामना हुआ । दोनों ही एक साथ बोल उठे, “हैलो !” दोनों ने ही साथ-साथ हाथ बढ़ाए, और एक-दूसरे के हाथ दबा लिए । दोनों ने ही कहा, “तुम्हारे रहते मुझे कोई चिन्ता नहीं ।”

टूर्नामेंट में ये लोग फ़ाइनल तक पहुँचे थे । फ़ाइनल में हार गए । खेल बम्बई में हुआ था । लौटकर आए तब तक दोनों एक-दूसरे के अंतरंग बंधु हो चुके थे ।

क्लेटन ही उसे पॉली ब्राउन के घर ले गया था । पॉली ब्राउन बहुत खुश हुई थी । इस दुर्दान्त लड़के की कॉलेज में ऐसी लोकप्रियता

देखकर सदा आश्चर्य होता था। और कॉलेज के सब लोगों से वह भी अलग न थी। उसने कृष्णेन्दु का स्वागत करते हुए कहा था, “अर्थेलो, दि टर्बुलेण्ट मूर !” उसके बाद ही हँसकर बोली थी, “इट इज दि कॉज, इट इज दि कॉज।” तुम यह खूब कहते हो। मुझे बड़ा अच्छा लगता है। पर रीना को चिढ़ाने के लिए क्यों कहते हो ? “यू नॉटी बॉय !”

रीना उस समय कमरे के दरवाजे पर खड़ी हुई मन्द-मन्द हँस रही थी। क्लेटन ने कहा था, “लैट बाइगॉन्स बी बाइगॉन्स। शेक हैण्ड्स यू हू, एण्ड बी फ्रेण्ड्स।”

कृष्णेन्दु ने उठकर हाथ बढ़ाते हुए कहा था, “मैं माफ़ी माँगता हूँ।”

रीना ने हाथ बढ़ाकर कृष्णेन्दु का हाथ दबाते हुए कहा था, “बी आर फ्रेण्ड्स।”

बातचीत के बीच अचानक पॉली ब्राउन ने आकर कहा था, “वह तुम एक बार सुनाओ न ! ‘इट इज दि कॉज, इट इज दि कॉज।’ वही ! सचमुच तुम वह बहुत अच्छा सुनाते हो। तुम्हारी भारी आवाज में एण्ड... एण्ड... यू कैन पुट लाइवली इमोशन इन इट।”

रीना बोली, “एण्ड...” पर इतना कहकर ही चुप हो गई।

क्लेटन ने पूछा, “क्या ?”

रीना ने हँसकर कहा था, “तुम्हारी अपेक्षा कहीं अधिक अर्थेलो की भाँति। टॉल, मोर मूर-लाइक, इजंट इट ?”

कृष्णेन्दु ने कहा, “पर तुमसे अधिक अच्छी डेसडिमोना की मैं कल्पना भी नहीं कर सकता। मुझे लगता है परफ़ैक्ट।”

क्लेटन ने कहा, “तो फिर तुम दोनों सारा सीन करो ! लैट अस एंजॉय एण्ड मेक दि मेमोरी ऑफ दि फर्स्ट मीटिंग अनफॉरगेटेबल। आज के इस परिचय की स्मृति चिरस्मरणीय हो जाय।”

जेम्स ब्राउन एक बार आकर तुरन्त ही लौट गया था। अजीब

आदमी है। ठीक अजीब नहीं, वह उन सब अंग्रेजों में से है जो इस देश में एक छोटे-मोटे लाट साहब हैं। काले आदमी के साथ बात करने में भी नफ़रत होती है; और पक्के क्रिश्चियन की भाँति हीदेन को छूने पर हाथ धोता है। शक्तिहीन है, इसीलिए चुपचाप रहता है।

रीना ने ब्राउन साहब के कमरे की ओर नज़र डालते हुए कुछ आपत्ति की थी। ब्लेटन ब्राउन के पास जाकर अनुमति ले आया था। ब्राउन साहब ने पूछा था, क्या सिर्फ कॉलेज में पढ़ने वाला भला लड़का है या भले घर का लड़का है?"

ब्लेटन ने कहा था, "बोथ।"

"तो जरूर अनुमति दे सकता हूँ। ऊँची जाति का अपने यहाँ?"

"हाँ। ही इज़ ए गुप्ता। वी हैव सो मैनी गुप्ताज़ अमंग्स्ट अवर प्रोफेसर्स।"

"येस येस, आई नो। गुप्ताज़ आई नो। येस।"

ब्राउन साहब ने अनुमति दे दी थी।

उन लोगों ने सारे ही दृश्य का पाठ किया था। अन्त में एक घटना भी हो गई। डेसडिमोना की हत्या करने के समय जब उसने, 'इट इज़ टू लेट' कहकर उसका गला घोटने का अभिनय किया, और रीना जब 'ओह लॉड, लॉड, -लॉड' कहकर कातर चीत्कार कर उठी, तब उस क्षण वही आया 'रीना रीना' चिल्लाती हुई कमरे में घुस आई थी।

चौककर कृष्णेन्दु उठकर अलग खड़ा हो गया था।

रीना ने जल्दी से उठकर बैठते हुए उसे सान्त्वना दी थी। चकित हो गया था कृष्णेन्दु! रीना ने मेदिनीपुर-मानभूम-बाँकुड़ा इलाके की ख़ास शुद्ध बँगला भाषा में सान्त्वना दी थी।

"भूठ, भूठ; यह सब भूठ-मूठ है; यह सब थिएटर की बातचीत है।"

जेम्स ब्राउन भी अपने कमरे से निकलकर दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया था। डरे हुए पशु की भाँति स्थिर दृष्टि से ताकती हुई वह स्त्री स्तब्ध मूक हो गई थी।

“निकलो, इस घर से निकलो यू बिच, गेट आउट !” ब्राउन ने क्रोध में गरजते हुए कहा था। कृष्णेन्दु को थोड़ी बेचैनी-सी अनुभव हुई थी। रीना उस स्त्री का हाथ पकड़कर उसे वहाँ से बाहर उसके कमरे में पहुँचा आई थी। पॉली ब्राउन ने जेम्स ब्राउन को सम्हाला था।

क्लेटन ने हँसकर कृष्णेन्दु से कहा था, “दैट नेटिव वीमन—उसने रीना को एक महीने की उम्र से पाल-पोसकर बड़ा किया है। बहुत प्यार करती है। रीना भी नापसन्द नहीं करती। बट यू सी, ही इज-नॉट लाइक इट। मिस्टर ब्राउन अकृतज्ञ नहीं हैं, वह उसे निकालना नहीं चाहते, निकालना भी नहीं है। पर वह उसे माँ की भाँति प्यार करना चाहती है, अपनी बेटी की भाँति देखना चाहती है। यह वह बरदाश्त नहीं कर पाते। यू नो, मिस्टर ब्राउन इज ए पक्का साहेब। सिर्फ यही नहीं, ब्राउन बड़े कट्टर क्रिश्चियन भी है।”

रीना का वह रूप अभी तक याद है। एक बार देखती थी उस ओर जिधर ममता में आवद्ध मूक पशु की भाँति उसकी धाय चली गई थी, और फिर देखती थी बाप के कमरे की ओर। अचानक वह उम कमरे से निकलकर अपने कमरे की तरफ चली गई थी।

पॉली ब्राउन ने लौटकर कृष्णेन्दु से कहा था, “मुझे बहुत दुःख है गुप्ता। तुम कुछ खयाल मत करना ! तुम जानते नहीं, यह स्त्री बड़ी अनक्लीन इन माइण्ड है। और कुछ आउट ऑफ माइण्ड भी है—थोड़ी-सी पागल। रीना सोती है कि वह इधर-उधर जादू-टोना करती रहती है। बड़ी खुशी हुई आज। और तुमने कितना सुन्दर काव्य-पाठ किया। फिर भी कभी आना। प्लीज। प्लीज, इ कम !”

क्लेटन के साथ उसका यह स्नेह-सम्बन्ध शारीरिक बल को लेकर ही था। उनके होस्टल में पहुँचते ही पंजा लड़ाने से शुरुआत होती। कमरे में घुसते ही हाथ बढ़ाकर कहता, “कम ऑन !”

उसके बाद तरह-तरह की होड़ चलती । जो कुछ भी क्लेटन को आश्चर्यजनक लगता, उसे जब वह पॉली ब्राउन के मकान पर कृष्णेन्दु को खींच ले जाकर दिखला लेता, तब पीछा छोड़ता ।

सूखे नारियल को सिर्फ हाथ की ताकत से छीलकर सिर के ऊपर तोड़कर खाते हुए देखकर उसने पूछा था, “पत्थर हो ?”

“नहीं । काटने से खून निकलता है,” कृष्णेन्दु ने हँसकर कहा था ।

एक दिन पचास उबले हुए अण्डे खाने का प्रमाण भी उसे ब्राउन-परिवार के घर जाकर दे आना पड़ा था ।

इसी बीच रीना और वह कब परस्पर बन्धु हो उठे यह ठीक-ठीक बताना कठिन है, पर यह बन्धुत्व तिल-तिल करके बना था । अचानक किसी एक दिन की किसी आकस्मिक घटना के फलस्वरूप या एक दिन के किसी आकस्मिक आवेग का उच्छवास-मात्र नहीं था । अत्यन्त सहज स्वच्छन्द भाव और गति से बढ़ा था—ठीक फूल खिलने की भाँति ।

हाँ, फूल खिलने की भाँति । फूल जिस दिन खिलता है उस दिन मूरज निकलने के पहले तक भी उसके वर्ण और गन्ध की घोषणा किसी को नहीं बुलाती । पर जब खिलता है तो उसके रंग की शोभा, गन्ध का निमन्त्रण चारों ओर बिखर जाता है । इसी भाँति उन लोगों ने एक दिन एक-दूसरे को जाना था ।

क्लेटन दो वर्ष फेज होने के बाद जब पास होकर निकला तब कृष्णेन्दु छठे वर्ष में था । और उस समय वह सिर्फ खेल के मैदान में ही प्रसिद्ध न था, केवल दुर्दान्तता के लिए ही सर्वजन-परिचित न था, विद्या के क्षेत्र में भी उसकी प्रतिभा उजागर होने लगी थी । चिकित्सा की कई पद्धतियों में तभी ही वह पक्के डॉक्टर की भाँति निपुण हो गया था । हैजे में सैलाइन इन्जेक्शन और इन्ट्रावीनस इन्जेक्शन देने के काम में वह बहुत दक्ष था । उसकी यह दक्षता ऐसी थी कि हैजे के केस में नामी डॉक्टर तक उसे मदद के लिए बुलाते थे । इन्जेक्शन वही देता था, डॉक्टर बस उपस्थित रहते । इससे उसे पैसा भी मिल जाता था ।

सलवर्सन इन्जेक्शन देने के लिए तो तब उसने एक हाल ही में पास होने वाले डॉक्टर मित्र के नाम से एक चेम्बर ही खोल लिया था। इसमें क्लेटन ने उसकी बड़ी सहायता की थी। एंग्लो-इण्डियन समाज में उसे परिचित करा दिया था। क्लेटन ने तब तक उसे सूट पहनना भी सिखा दिया था। धोती-कमीज पहनने वाले डॉक्टर के पास ये लोग नहीं आना चाहते। उसे पैसे की कमी न होती थी। खुद ही कमा लेता था।

क्लेटन पास हुआ। उन लोगों को पास होते ही नौकरी मिल जाती है। नई नौकरी पर जाना होगा। सैनिक छात्रों ने जाने वालों का अभिनन्दन किया। क्लेटन के प्रयत्न से 'आर्थेलो' का वही दृश्य फिर अभिनीत हुआ। उसीके कहने से आर्थेलो कृष्णेन्दु बना और डेसडिमोना रीना।

उस नाटक में ही कृष्णेन्दु ने आवेग-प्रखर दबे हुए गले से डेसडिमोना के मुख के ऊपर झुककर कहा था, "आइ विल स्मैल दी ऑन दि ट्री..." तभी मानो वह अपना होश खो बैठा था। वह हिन्दू है, वह काला आदमी है। क्लेटन के आग्रह से अभिनय के लिए आर्थेलो का पार्ट मिलने पर भी डेसडिमोना रीना ब्राउन को चूमने का अधिकार उसका न था। तीव्र आवेग के बावजूद वहाँ उसने अपने-आपको संवरण किया। किन्तु—

"So sweet was ne'er so fatal. I must weep.

But they are cruel tears. This sorrow's heavenly."

कहते-कहते उसकी बड़ी-बड़ी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली थी। गला रुँधा जा रहा था, किसी तरह उसने समाप्त किया,

"It strikes where it doth love. She wakes."

रीना ब्राउन आँख मूँदे हुए भी उस आवेग के स्पर्श का अनुभव कर रही थी। आँख खोलकर देखा कि कृष्णेन्दु की आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है। पल-भर के लिए वह अभिभूत हो गई थी। अगले ही क्षण उसने और कुछ अनुभव किया—शायद एकदम स्पष्ट नहीं, पर

अंधकार की भाँति वराँहीन भी नहीं ; कुहासे के बीच रंगों की झलक की भाँति ।

बाद में रीना ने कृष्णेन्दु से यह बात कही थी । रीना को कहने के लिए शब्द नहीं मिल रहे थे, कृष्णेन्दु ने ही सुझाया था । “तुम कहना चाहती हो कि अन्धकार दूर होने के बाद कुहासे के बीच इन्द्रधनुष के रंगों की झलक की भाँति ? जानती हो, काला कोई रंग नहीं । काला-पन रंग का अभाव है, वराँशून्यता ।”

रीना ने कहा था, “दैट्स इट ।” फिर बोली, “उसके बाद जब तुमने कहा, ‘थिन्क ऑफ दाइ सिन्स’, मैंने कहा, ‘दे आर लव्स आइ बेयर टु यू’, उस क्षण मेरी भी आँखों से आँसू फूट निकले थे ।”

नाटक के बाद दोनों एक-दूसरे से कोई बात कहे बिना ही चले गए थे ; मिले तक न थे । सात दिन तक । सिर्फ यही नहीं, कृष्णेन्दु जाने कैसा हो गया था ।

कुछ ही दिन पहले लिखी हुई पिताजी की चिट्ठी बार-बार पढ़ता और सोच में डूब जाता । पिताजी अचानक कलकत्ता आये थे । महीने-भर से उसने कोई चिट्ठी नहीं लिखी थी, इसीसे चिंतित होकर आ पहुँचे थे । और भी एक कारण था । उनके गाँव के हरिविलास बसु कलकत्ता में रहते थे । उन्होंने गाँव जाकर कहा था, “लड़का तो साहब हो गया, श्यामसुन्दर काका ! कोट-पेंट पहनकर साहब-मेम के संग घूमता-फिरता है । रेस्टोरेंट में एक मेज के ऊपर बैठकर खाता-पीता है । मैंने अपनी आँखों से देखा है ।”

पिताजी अगले दिन ही कलकत्ता आकर घर्मतल्ला के उस चेम्बर में पहुँचे थे । कृष्णेन्दु आजकल मेस के बजाय इसी पते का व्यवहार किया करता था । कोई गोल-माल नहीं होता था ।

कृष्णेन्दु उस समय चेम्बर में एक फिरंगी लड़की को इन्ट्रावीनस इंजेक्शन दे रहा था । उसके साथ की एक और लड़की बाहर बैठी थी । और दो मरीज इंतजार कर रहे थे । सभी सलवर्सन के केस थे । इस

मामले में इनकी मनोवृत्ति वैज्ञानिक है। ये लोग लज्जा नहीं करते। आकर साफ़-साफ़ कह देते हैं, 'वैल डॉक, मुझे शक है, और शक का कारण भी है, कि मुझे बुरा रोग लग गया है। मेहरबानी करके देख लीजिए !' और इलाज भली-भाँति खत्म करके धन्यवाद देकर चले जाते हैं।

चेम्बर से लड़की को इन्जेक्शन देकर बाहर निकलते ही उसने पिता को देखा।

“पिताजी !”

“हाँ। महीने से भी अधिक अड़तीस दिन से तुमने चिट्ठी नहीं दी। चिन्तित होकर आया हूँ।”

“मैंने तो दी थी चिट्ठी !”

“हमें नहीं मिली।”

अचानक याद आया कि एक पत्र लिखा था डाक में डालने के लिए। चेम्बर में घुसकर ब्लॉटिंग पैड उठाकर चिट्ठी निकाली। अपराधी की भाँति उसे हाथ में लिये पिताजी के पास लौटकर उसने कहा था, “काम में भूल ही गया। डाली नहीं गई।”

पिता हँस दिये थे। इस बारे में कोई बात न कहकर उन्होंने पूछा था, “ये सब ?”

“रोगी।”

“रोगी ? तुम....?”

“एक डॉक्टर मित्र यहीं इलाज करते हैं, उन्हींकी मदद करता हूँ। आपके आशीर्वाद से मैं डिग्रीशुदा डाक्टरों से भी अच्छा इन्जेक्शन देता हूँ।”

तभी क्लेटन और रीना आ गए थे। “हैलो मैंन....”

कृष्णेन्दु ने जल्दी से अपने पिता का परिचय देते हुए कहा था, “क्लेटन, ये मेरे पिताजी हैं। पिताजी, ये मेरे मित्र। हमारे कालेज में ही पढ़ते हैं, जॉन क्लेटन, और ये हैं रीना ब्राउन, मेरी बन्धु।”

“ग्रेण्ड ओल्ड मैंन,” क्लेटन ने सचमुच खुश होकर बहुत सम्मान-

पूर्वक ही यह बात कही थी ।

रीना स्थिर दृष्टि से उनकी ओर ताक रही थी ।

पिताजी और नहीं रुके, चले गए थे । दूर सम्पर्क के किसी रिश्ते-दार के यहाँ जाकर ठहरे थे । उनके कालीघाट चले जाने के बाद रीना ने कहा था, “ही इज ए ट्रू हिन्दू, ए टिपिकल ब्राह्मिन । मुझे तो बहुत ही अच्छा लगा । कैसी मीठी बात करते हैं ! एण्ड यू, टर्बुलेंट मूर, ए रॉटर, हिज सन !”

कृष्णेन्दु हँस पड़ा था ।

अगले दिन वह पिता को हवड़ा स्टेशन पर ट्रेन में बैठा आया था । पिता बात कम ही करते थे, गाड़ी में बैठने के बाद एक भी बात नहीं कही थी । गाड़ी छूटने के समय सिर्फ इतना कहा था, “होशियारी से चलना !”

कृष्णेन्दु को हँसी आ गई थी । होशियारी से चलना होगा ? कैसे ? घर पहुँचकर पिताजी ने पत्र लिखा । लिखा था, “इच्छा थी कि आते समय तुम्हारे सामने ही सब बात समझाकर कह जाऊँ, पर ‘होशियारी से चलना’ के सिवा और कुछ न कह सका । पत्र में सब कुछ खुलासा लिखने बैठा हूँ फिर भी जाने कैसी बाधा अनुभव कर रहा हूँ । तुम्हारी माँ से भी ये सब बातें नहीं कह सका हूँ । इसीसे मेरे मन की हालत समझ सकोगे । मुझे लग रहा है कि उचित न होगा । तुम योग्य पुत्र हो । विद्या और बुद्धि में जब तुम्हारी सुख्याति हो रही है तब किस तरह से बुरा कहूँ ? पर तो भी कहता हूँ कि मुझे अच्छा नहीं लगा । लगता है, ठीक नहीं होगा । मानो बहुत दूर बहे जा रहे हो । हमारे शास्त्रों में कहा है, उपनयन के समय तीन कदम से अधिक नहीं बढ़ना चाहिए । नहीं तो फिर लौटने का रास्ता नहीं बचता । मुझे लगता है कि तुम तीन कदम से अधिक ही बढ़ गए हो । दूसरी ओर कहा है, एक साथ सात कदम चलने से अविच्छेद बन्धुत्व होता है । देखा कि कलकत्ता में तुम बहुतों के साथ बहुत-से कदम चल चुके हो । सात कदम चले

हो या नहीं, नहीं जानता । सप्तपद पूरे न हुए हों तो और आगे न बढ़ना । गोविन्द तुम्हारी रक्षा करें !”

पत्र पाने के बाद भी कृष्णेन्दु हँसा था । पिताजी की निमूल शंका पर हँसे नहीं तो क्या करे ? पर इस घटना के बाद, अर्थात् क्लेटन आदि के विदा-उत्सव के उपलक्ष्य में, आँथेलो के अभिनय के बीच अचानक ही अपना जो आत्म प्रकटीकरण उसके आगे हुआ, उसके बाद पिताजी की चिट्ठी को खोलकर बार-बार पढ़े बिना उससे नहीं रहा गया । स्वयं ही हिसाब लगा रहा था, कितने कदम पीछे छोड़ आया है, कितने कदम चला आया है रीना के साथ ।

स्कूल एक कदम, सेण्ट जेवियर्स एक कदम, मेडिकल कालेज एक कदम । तीन कदम हो गए हैं । वह जानता है कि उपनयन के समय दो के बाद तीसरा पैर रखते समय पिता अथवा उपनयनदाता ही पकड़कर पीछे हटा देते हैं । घर-गृहस्थी में सीमित होकर बँधकर ही जीवन कट जाता है । मनुष्य के प्राण बन्द जल की भाँति भाप बनकर पुनर्जन्म की जल-धारा के समान भरते हैं, प्रवाह की कामना करते हैं । उसे यदि नदी के स्रोत की गति मिल जाय तो कोई खेद नहीं । सचमुच ही वह बहुत दूर चला आया है । उसकी रक्षा के लिए गोविन्द की कोई ज़रूरत नहीं । गोविन्द के क्षेत्र से बाहर है वह ।

वह तो गोविन्द को मानता नहीं, विज्ञान के तथ्यों ने उसके आगे नया रास्ता खोल दिया है ।

और रीना के साथ ? कितने कदम ? कितने कदम हो गए ?

नहीं, और उस रास्ते पर नहीं चलना होगा ! रीना क्लेटन की भंगेतर है । क्लेटन उसका मित्र है । उसने रीना के घर जाना छोड़ दिया । रीना ने ही चिट्ठी लिखी । उसने उत्तर दिया, “जौनी था, जौनी के साथ जाया करता था । जौनी चला गया है । सिर पर इस्त-हान भी है । जौनी के लौटने पर आऊँगा । मेरी गलती पर ध्यान न देना ।”

“बाबा साहब !”

“कौन ?” चौंककर कृष्णस्वामी खड़े हो गए ।

“इतने सवेरे पैदल कहाँ जा रहे हैं ? साइकिल कहाँ गई ?”

किसी गाँव से सिर पर घड़ा रखे और पाट के शाक का बोझा लिये कुछेक नायक विष्णुपुर की ओर जा रहे थे ।

कृष्णस्वामी रास्ता भूल गए हैं । जंगल में रास्ता भूलना मामूली बात है ।

अपने घर का रास्ता छोड़कर बहुत दूर चले आए हैं । जंगल समाप्त होने को है । जंगल खत्म होते ही एकदम विष्णुपुर के किनारे पहुँच जायेंगे । बिलकुल यमुना के बाँध के पास ।

थमकर खड़े हो गए कृष्णस्वामी ।

यहाँ से लौटेंगे ? नहीं ।

एक बार चलेंगे लाल बाँध के पास । लाल बाँध के किनारे ऊपर उस पत्थर को छू आएँगे, जहाँ रामकृष्ण परमहंस ने बैठकर विश्राम किया था ।

मन के भीतर, अबाध्य स्मृतियों का पीड़न उनसे और नहीं सहा जाता ।

मिट जाय, अतीत की सारी स्मृति मिट जाय । पारस पत्थर के छूते ही लोहा सोना हो जाता है । उस परम वैरागी के आसन के स्पर्श से उनका मन भी वैराग्य से भर उठे । गेरुए के दाग से इन्द्रधनुष के सातों रंग पूरी तरह ढके रहें ।

पांच

महापुरुष का स्पर्श महापुरुष के साथ ही चला जाता है। कम-से-कम भौतिक जगत् में तो नहीं रहता। भौतिक जगत् में पकड़कर रोक रखने की शक्ति नहीं होती, होती तो मित्र के फराओं की ममियों की कृपा से ही पुराना मित्र बचा रहता; बुद्ध की अस्थियों के ऊपर स्तूप के प्रताप से ही भारतवर्ष के सारे दुःख मिट जाते; ईश्वर के पुत्र के आविर्भाव के बाद पड़ोसी-पड़ोसी के मेल से सारे यूरोप में एक अपूर्व प्रेम का राज्य खड़ा हो जाता।

रह जाती है महापुरुषों की वाणी। मनुष्य के भीतर-ही-भीतर बहती रहती है नदी की भाँति। पर मन में जब तृष्णा जागती है, जब मन मरुभूमि हो उठता है, तब उस नदी का स्रोत भी सूख जाता है; सूखकर तप्त बालू के टीले की भाँति हाहाकार करने लगता है।

मन ठीक उसी प्रकार प्रखर तृष्णा से हाहाकार कर रहा है। किसी प्रकार भी कृष्णस्वामी रीना ब्राउन की बात भूल नहीं पाते। कैसे भूलें ? इस रीना को देखकर उस रीना की याद कैसे भूलें ?

विष्णुपुर के लाल बाँध के किनारे पत्थर से टिके हुए सोच में डूबे हैं कृष्णस्वामी।

याद आती है रीना की वही मूर्तिमती सान्त्वना-जैसी छवि। दीर्घ कृष्ण पक्ष के घेरे के बीच जल से भरी हुई बड़ी-बड़ी दोनों आँखें। सजल नयनों से कृष्णेन्दु की ओर देखकर उसने कहा था, “यू आर हार्ट-लैस, यू आर हार्टलैस, कृष्णेन्दु ! आइ डिड नॉट नो ! नैवर थाँट

इट ईवन !”

अचानक हार्ट फ़ेल होने से कृष्णेन्दु की माँ मर गई थीं । कृष्णेन्दु तार पाकर गया था और श्राद्ध आदि निबटाकर घुटा हुआ सिर लिये कलकत्ता लौटा था । मित्र लोग यह बात जानते थे, पर रीना को कहकर जाने की बात उसे न सूझी थी । कई महीनों से वह कुछ दूर ही हो गया था । वह डॉक्टर है । आजकल डॉक्टरी में मनोविज्ञान भी पढ़ना पड़ता है । एक साथ नब्बे दिन तक मन को बाँधे रखने से, दूर हटाकर रखने से मन से आकर्षण का सूत्र जीर्ण-शीर्ण हो सकता है । उस दिन के बाद उसने सकल्पपूर्वक यही किया था । रीना क्लेटन की मनोनीता है । उसके माता-पिता जीवित हैं । पॉली ब्राउन के साथ भेंट होती थी, रोज़ ही उससे बातचीत करता; पर कम । लौटने के बाद उसके घुटे हुए सिर को देखकर पॉली ब्राउन ने आश्चर्य से पूछा था, “बया हुआ कृष्णेन्दु ? ऐनी मिसहैप ?”

“मेरी माँ...।”

“मर गई ? माता-पिता के मरने पर तुम लोग सिर घुटा देते हो ?”

“हाँ मिसज़ ब्राउन, मेरी माँ अचानक हार्ट फ़ेल होने से मर गई । मैं उन्हें देख भी न पाया ।”

पॉली ब्राउन ने परम आत्मीय की भाँति ही सात्वना देने की कोशिश की थी । हृदय से धन्यवाद दिया था कृष्णेन्दु ने । सन्ध्या को वह धर्मतल्ला के चेम्बर में मित्र के साथ बैठा था कि रीना आई । आँखों में आँसू भरकर उसने तिरस्कार के स्वर में कृष्णेन्दु से शिकायत की थी, “तुम हृदयहीन हो कृष्णेन्दु ! मैं नहीं जानती थी । सोचा भी नहीं था ।”

“बैठो रीना !”

“नहीं । यही बात कहने के लिए आई थी ।”

हाथ पकड़कर उसे रोकते हुए कृष्णेन्दु ने कहा था, “अपना अपराध स्वीकार करता हूँ ।”

रीना बैठ गई थी। उस दिन केवल उनकी माँ की बात ही पृच्छती रही थी और सचमुच ही रो पड़ी थी। “आज की बातचीत मेरे मन में अक्षय रहेगी रीना ! तुम्हारा पवित्र हृदय स्वर्ग की भाँति है। उसके स्पर्श से मेरा मन शीतल हो गया।”

थोड़ी-सी हँसी खिल पड़ी थी रीना के मुख पर—वेदना से म्लान किन्तु शांत। कहा था, “सचमुच माँ का प्रेम मुझे कभी नहीं मिला कृष्णेन्दु ! पॉली मासी मुझे प्यार करती हैं, पर उनसे भी गहरे प्रेम का स्वाद मुझे कुन्ती के पास मिलता है। सोचती हूँ, उसने तो सिर्फ पाला है। मेरी आया है। तो फिर गर्भ में रखने वाली माँ के स्नेह का स्वाद कैसा होता होगा ?” कृष्णेन्दु रीना के जाने के बाद कुछ देर तक अभिभूत बैठा रहा था।

रीना के साथ सम्पर्क फिर से नया हो उठा। सूत्र सूत का न था, काल के साथ कुछेक महीनों में जीर्ण हो जाने वाले उपादानों से बना न था। वह था सोने-जैसी धातु से निर्मित—हज़ार वर्ष बाद भी मिट्टी के नीचे से निकलने वाले सोने के आभूषण की भाँति हज़ार वर्ष पहले के दो हृदयों के मिलन की साक्षी समान।

असली सोना ; कोई मिलावट न थी।

फिर अचानक एक दिन, वह अस्पताल के कम्पाउण्ड में घुस रहा था कि रीना की आया दौड़ती हुई आई और उससे बोली, “डॉक्टर साहब !”

उसकी आँखों की दृष्टि अद्भुत थी। वह दृष्टि ऐसी थी मानो बोल रही हो। हृदय के भीतर क्रोध हो, प्रतिहिंसा हो, भय हो, आतंक हो, वह मानो अपना रंग लेकर उनमें स्पष्ट बाहर आ जाता था। कुन्ती की आँखों में उस दिन आतंक और आकुल प्रार्थना थी।

कृष्णेन्दु ने तब हाल ही में परीक्षा पास की थी और हाउस-सर्जन था। उसकी इच्छा थी कि विलायत जाय। दो-एक वर्ष में ही इतने रुपये इकट्ठे हो जायेंगे। हैजे के इलाज में सैलाइन इंजेक्शन के लिए अभी से

उसकी बड़ी ख्याति थी और उसमें साहस भी बहुत था। इधर उसका उपार्जन का रास्ता खुला था। जब तक पास नहीं किया था तब तक किसी और डॉक्टर के पीछे-पीछे जाना पड़ता था। अब उसे अकेले जाने का अधिकार प्राप्त हो चुका था। इस देश के अमीरों के घर में बुरा खान-पान भी है, और चाहे जो-कुछ खाने-पीने की प्रवृत्ति भी उनमें बड़ी प्रबल है। कलकत्ता शहर में मक्खियों की कमी नहीं। वैक्सीन भी लोग नहीं लेते। उन लोगों के घरों से रुपया पैदा करने के रास्ते में उसके लिए कोई बाधा नहीं। धर्मतला के चेम्बर के सिवा चितपुर के इलाके में भी एक चेम्बर खोल लेगा। सलवर्सन इंजेक्शन में भी उसका नाम है। एंग्लो-इंडियन बिना लज्जा के इलाज कराते हैं। इस इलाके में लज्जा के कारण जो बहुत छिप-छिपाकर इलाज कराना चाहते हैं, उनके लिए चेम्बर होगा। वहाँ वह चार के बजाय आठ रुपये फ्रीस रखेगा।

कुन्ती के मुख और आँखों की हालत देखकर वह डर गया था।
“क्या है कुन्ती ?”

कुन्ती ने भय से आँखें फैलाते हुए कहा था, “रीना रो रही है, डाक्टर साहब !”

“रो रही है ?”

“फफक-फफककर रो रही है—सवेरे से।”

“क्यों ? क्या हुआ ?”

“पता नहीं, साहब के पिता के पास से कोई चिट्ठी आई है साहब के पास।”

“चलो, मैं चलता हूँ !”

एक चिट्ठी उसकी ओर फेंककर रीना ने कहा था, “मैं क्या करूँ कृष्णेन्दु ?” और वह फिर फूट-फूटकर रो पड़ी थी।

जॉनी के पिता चार्ल्स क्लेटन ने ब्राउन साहब को पत्र लिखा था।
“आपका पत्र जॉन को मिल गया। आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। आप एक सच्चे अंग्रेज और क्रिश्चियन हैं। मैं भी हूँ। जॉनी को भी वही

शिक्षा मिली है। इस मामले में वह अब आपको पत्र लिखने ही वाला था कि आपका पत्र मिला। जॉनी जो बात आप लोगों को सूचित करना चाहता था वह मैं ही लिखे दे रहा हूँ। परीक्षा के बिना प्रेम का ठीक मूल्य नहीं समझा जा सकता। आपकी लड़की रीना के साथ बन्धुत्व को उसने भूल से प्रेम समझ लिया था। शायद आप लोगों ने भी ऐसा समझा था। जॉन ने यहाँ आकर नौकरी कर लेने के बाद बड़े समाज में प्रवेश करके अपने लिए प्रेमपात्री खोज ली है। कर्नल रेमंड मेरे पुराने मित्र हैं। पॉली उन्हें जानती है। उन्हींकी लड़की है एमिली। एमिली रेमण्ड बहुत ही योग्य और सुन्दर लड़की है। ये दोनों ही एक-दूसरे से प्रेम करते हैं, और शीघ्र ही वे पति-पत्नी हो जायेंगे। ए. गर्ल इन डिस्ट्रेस इज ए सेक्रेड थिंग। आपकी लड़की रीना को दुःख होगा, उसके लिए मेरी हार्दिक सहानुभूति स्वीकार कीजिए। समय से सब ठीक हो जायगा।”

कृष्णेन्दु स्तम्भित हो गया था। क्लेटन के बारे में मन में एक आघात-जैसा लगा था। उसके मन के भीतर एक तीखा क्षोभ जाग उठा था। आज वह यहाँ होता तो... वह खुली हुई खिड़की में से कलकत्ता की इमारतों के ऊपर आकाश की ओर ताक रहा था। क्लेटन ऐसा ढोंगी निकला !

“आई गेव हिम माई ऐग्री थिंग, कृष्णेन्दु,” रीना तकिए में मुख छिपाकर रो उठी।

“रीना, रोओ मत रीना ! लुक एट मी इन माई फ्रेम रीना !”

रीना ने घूमकर उसकी ओर ताका था। मृदु उदास हँसी के साथ कहा था, “तुम अगर आज मुझे आथिलो की भाँति गला घोटकर मार डालते, कृष्णेन्दु !”

एक क्षण में क्या हो गया था। एक बड़े भारी ऊँचे बाँध को काँपते-काँपते हठात् टूटकर भूमिसात् होते देखा है ? ठीक उसी भाँति सब बाधा-बन्धन टूटकर गिर गए और उन्मुक्त जल-स्रोत की भाँति जीवन का सारा

आवेग मानो पल-भर में उन्मुक्त हो उठा। “रीना—रीना—मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।” ये कुछेक शब्द उसके मुख से निकल पड़े थे। उमने पागल की भाँति रीना के वक्ष पर गिरकर उसे बाँहों में भर लिया था।

“रीना, आई लव यू, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, रीना। रीना ! माई लव। मेरी सर्वस्व रीना ! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ !”

कोमल अस्फुट स्वर में रीना ने केवल इतना कहा था, “कृष्णेन्दु ! माइ कृष्णेन्दु !”

“मैं तुमसे प्रेम करता हूँ रीना !”

“मैं भी तुमसे प्रेम करती हूँ !”

उसके बाद वे एक-दूसरे के मुख के ऊपर मुख रखकर बहुत देर तक स्तब्ध बैठे रहे थे। कुछ देर बाद कृष्णेन्दु ने कहा था, “मैं देर नहीं करना चाहता। जितनी जल्दी हो सके विवाह करना चाहता हूँ। कल आकर मैं तुम्हारे माता-पिता से बात करूँगा।”

अगले दिन कृष्णेन्दु ने ब्राउन साहब से जाकर बातचीत की थी।

ब्राउन ने उसके मुँह की ओर देखकर कहा था, “यू सी मिस्टर गुप्ता, मैं एक अंग्रेज हूँ। उससे भी अधिक, एक ईसाई हूँ। मेरी लड़की रीना अवश्य एंग्लो-इण्डियन है, उसके भीतर कुछ रक्त इस देश का भी है, पर वह भी ईसाई है। आजकल की भाँति कानूनी रजिस्ट्री द्वारा विवाह मुझे मंजूर नहीं। वह भी राज़ी नहीं होगी। वह मुझसे भी अधिक ईसाई है। तुम्हें मैं जानता हूँ। तुम कर्मठ व्यक्ति हो, साहसी और सज्जन हो। विवाह से मुझे इन्कार नहीं, पर तुम्हें ईसाई होना होगा।”

“ईसाई होना होगा !” कृष्णेन्दु स्तम्भित रह गया ! यह सब उसने नहीं सोचा था।

“सोच देखो, यंग मैन ! कल आकर उत्तर दे जाना। कल न हो सके तो और कुछेक दिन बाद सही।”

कृष्णेन्दु सिर झुकाकर सोचता-सोचता लौटा। रीना के कमरे के दरवाजे पर ठिठककर खड़ा हुआ। दरवाजा बन्द था। उसने पुकारा,

“रीना !”

क्रन्दन-रुद्ध कण्ठ से उत्तर मिला था, “तुम जाओ, तुम जाओ । मैंने नहीं सोचा था । मैंने यह बात नहीं सोची थी ।”

“रीना !”

“नहीं ! नहीं ! नहीं !”

वह चला आया था । सीढ़ी के मोड़ पर कुन्ती खड़ी थी, वह भी रो रही थी । कृष्णेन्दु को देखकर बोली थी, “रीना मर जायगी, डाक्टर साहब, रीना मर जायगी ।”

पृथ्वी घूम रही थी, धरती-आकाश, घर-द्वार, मनुष्य—सब मानो चक्कर खाकर एक हुए जा रहे थे । एक असीम शून्यता से उसका मन भरा जा रहा था । सब शून्य है, सब शून्य है । रीना के बिना आज वह जीवित रहने की कल्पना भी नहीं कर सकता । धर्म ? धर्म को तो वह नहीं मानता । सचमुच ही नहीं मानता । ईश्वर को भी नहीं मानता । वह नये युग के नये सत्य को मानता है । ईश्वर नहीं, यह सत्य ही आज उसके लिए एक मात्र सत्य है । द्रुथ इज गॉड—सचमुच ही अगर भगवान् है, तो सब धर्म ही आज उसके निकट एक-से मिथ्या है । तो भी एक का महारा लेकर उसे रहना पड़ा है । वह नहीं मानता, पर लोग उसे कहते हैं हिन्दू, वैद्य । यह उसे कागज में भी लिखना पड़ता है, इसी रूप में फार्म भरने पड़ते हैं । आज रीना उसके जीवन का सत्य है । उसके लिए वह ईसाई होगा, ईसाई ही होगा । उसके पिता...

उसका हृदय भीतर से हाहाकार कर उठा ।

पिता ! उसके पिता ! क्या इसे खुशी-खुशी स्वीकार नहीं कर सकेंगे ? ईसाई होकर भी क्या वह उनकी संतान न रह सकेगा ? अपना धर्म लेकर वह रहेंगे । उनके आचार-आचरण सबको जिस श्रद्धा से वह आज देखता है वैसे ही सदा देखेगा । वह तो किसी धर्म के आचरण में अपने जीवन-सत्य को नहीं खोजेगा । वह अपना धर्म खोजेगा इस चिकित्सा-विज्ञान में से, चिकित्सक जीवन के आचार-आचरण में से । तो फिर किस

बात का विरोध, किस बात का संघर्ष होगा, नाममात्र को उसके ईसाई धर्म ग्रहण कर लेने से ? वह तो दूर ही रहता है, पिताजी गाँव में रहते हैं। वे वृद्ध हो गए हैं। उन्हें मेरी आवश्यकता ही कितनी होती है ? सेवा के लिए ? सेवा वह करेगा ही। वे छुएँगे नहीं, उसे नहीं छुएँगे, रीना को नहीं छुएँगे। क्यों नहीं छुएँगे ? क्यों ?

आधे पागल की भाँति वह बाहर चला आया। उसके अन्तर से लगा-कर देह का अणु-परमाणु तक पुकार रहा था, 'रीना—रीना—रीना !' रीना से अलग होकर वह जीवित नहीं रह सकता। यह उसकी देह-लालसा नहीं है। उसने बार-बार परीक्षा कर ली है। यह उससे अधिक कुछ है, बहुत अधिक कुछ।

अस्पताल से वह 'तबियत खराब है' कहकर चला आया। छोटे बैग में कुछ मामूली चीजें रखकर गाड़ी में जा बैठा; घर पर पिता के सामने आकर खड़ा हुआ।

“अचानक तुम ?” पिता चौक उठे।

“आप ही के पास आया हूँ, आज्ञा लेने के लिए। मैं एक ईसाई एंग्लो-इण्डियन लड़की से विवाह करना चाहता हूँ।”

पिता इस बात से चौंके नहीं, चीखे-चिल्लाए भी नहीं। उसके मुख की ओर देखकर अपने सदा के अभ्यास के अनुसार शांत भाव से ही बोले, “यह मैं जानता था।”

पिता के दोनों पैर पकड़कर कृष्णेन्दु पागल की भाँति कह उठा था, “आप कह दीजिए।”

पिता ने कहा था, “तुम पागल हो। नहीं तो पिता के पैर पकड़कर निर्लज्ज की भाँति यह बात नहीं कह पाते।”

“उसके बिना मैं नहीं जी सकता।”

“तुम्हारे मर जाने पर मैं आत्म-हत्या कर लूँगा, यह बात मैं कहीं तो भूठ होगा। मैं आत्म-हत्या नहीं करूँगा, कष्ट जरूर होगा, पर जीता रहूँगा। भगवान् का नाम लेकर जीता रहूँगा।”

वह चीख उठा था, “पिताजी !”

पिता ने शांत स्वर में कहा था, “मैंने उत्तर दे दिया है कृष्णेन्दु । उस लड़की से ब्याह कर लेने पर भी मेरे लिए तुम मृत हो, और लड़की को न पाने के कारण मर जाने से भी । मैंने तुमसे कहा था, ‘और आगे न बढ़ना ।’ तुमने नहीं सुना । उसके साथ जीवन-अग्नि को साक्षी करके सात कदम अगर चल चुके हो, तो फिर तुम्हारे लिए और क्या रास्ता है ?”

लम्बी साँस लेकर हँसते हुए उन्होंने गोविन्द का स्मरण किया था । और कोई बात नहीं कही, उठकर चले गए । कुछ देर खड़े रहकर कृष्णेन्दु जैसे पागल की भाँति गया था वैसे ही पागल की भाँति लौट आया—सीधा स्टेशन । कलकत्ता के रास्ते में बीच ही में उतर पड़ा था । सारी रात प्लेटफार्म पर बैठा रहा था । बहुत सवेरे फिर गाड़ी पकड़कर कलकत्ता लौट आया था ।

आकर रीना की चिट्ठी मिली थी, “नहीं—नहीं—नहीं । यह तुम मत करना कृष्णेन्दु, मैं पैरों पड़ती हूँ । मैं आसनसोल जा रही हूँ । रेवरेण्ड अर्नेस्ट के पास । उनके पास शांति है । मैं शांति के लिए ही जा रही हूँ । रीना ।”

तब तक कृष्णेन्दु दृढ़प्रतिज्ञ हो चुका था ।

रीना को उसे पाना ही होगा : जीवन के किसी भी मूल्य पर रीना उसे चाहिए ही । धर्म-जाति-कर्म-प्रतिष्ठा—सब-कुछ दे सकता है । रीना नहीं जानती, रेवरेण्ड अर्नेस्ट उसे शांति न दे सकेंगे; दे ही नहीं सकते । उनका धर्म भी नहीं दे सकता । शांति-सुख-आनन्द-वृत्ति—सब-कुछ है उसके उसे पा लेने में । जीवन का सुख, जीवन की शांति जिस प्रकार भोग में, पदार्थों में नहीं है उसी प्रकार जीवन को छोड़कर, आदर्शवाद अथवा धर्म के आचार-आचरण में, मन्त्र-जाप में, त्याग-तपस्या में भी नहीं है; केवल काया में भी नहीं है । काया को छोड़कर माया में भी नहीं है । काया-माया से मिला-जुला ही जीवन है : जीवन का काम्य

यदि कहीं है तो वह जीवन में ही है। रीना, तुम जो चाहती हो वह मुझ में है, मैं जो चाहता हूँ वह तुममें है। रूप, रस, स्वाद, मन-माधुर्य, स्नेह, प्रेम, सांत्वना यही तो जीवन की कामना है। यह सब जीवन में ही है। और कहीं नहीं है, और कहीं भी नहीं है।

वह फिर निकल पड़ा था। और अधिक देर नहीं। वह सीधा ब्राउन के पास, पॉली के पास गया था, “मैंने ईसाई होने का फैसला कर लिया है, मिस्टर ब्राउन।”

ब्राउन कुछेक पल तक स्थिर भाव से उसके मुँह की ओर ताकता रहा। फिर उठकर उसका हाथ पकड़कर बोला था, “मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ, गुप्ता।”

कृष्णेन्दु ने कहा था, “आशा करता हूँ रीना के साथ विवाह करने में आपको अब कोई आपत्ति न होगी।”

“बिल्कुल नहीं। बहुत ही खुशी-खुशी स्वीकृति दूँगा।”

“ठीक है, आज ही मैं चर्च जा रहा हूँ।”

“कहो तो मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूँ।”

“मैं बहुत आभारी होऊँगा, मिस्टर ब्राउन।”

ब्राउन की मदद से उसका धर्म-परिवर्तन बहुत ही आसानी से हो गया था। धर्म-परिवर्तन के बाद ब्राउन ने कहा था, “यू रन अप टु रीना। ब्रिग हर बैक।”

पॉली ने कहा था, “वह रोती-रोती गई है। अब हँसी-खुशी लौट आये।”

कृष्णेन्दु ने कहा था, “कल जाऊँगा।”

वह अपने घर लौट आया। एक दिन पहले ही उसने धर्मतल्ला में नया घर ले लिया था, रीना के साथ गृहस्थी बसाने लायक घर। जहाँ पहले रहता था वहाँ ईसाई होने के बाद वह नहीं रहना चाहता था। पड़ोसी बड़ी निष्ठुरता से चोट पहुँचाएँगे। मन में एक प्रश्न उठा था। धर्म यदि ईश्वर देता है तो इतना अनुदार क्यों है? प्रेमहीन क्यों कर

देता है मनुष्य को ? एक क्षण में ही इतने दिनों का प्रेम-स्नेह सब मिट गया ? सब मिट गया ? ईश्वर क्या प्रेमहीन, प्रीतिहीन, स्नेहहीन है ? वह क्या विद्वेषी है ? वह क्या चोट पहुँचाता है ? मन जाने कैसा हो गया था ? धर्म को वह नहीं मानता । ईश्वर नहीं है इस बात को वह अटल सत्य समझता है । तो भी हिन्दू धर्म छोड़ ईसाई धर्म ग्रहण करके मन जाने कैसा हो गया !

सारी रात वह बरामदे में डेक चेयर पर बैठा रहा । न्यू टेस्टामेण्ट लेकर पढ़ने की कोशिश की, पर मन नहीं लगा । रीना की तस्वीर लेकर उसे निहारता बैठा रहा । मन तब फिर उत्साह से भर उठा । सारी रात रीना के साथ व्याह के स्वप्न देखता रहा । वह उठा । आसनसोल, उसे आसनसोल जाना है—रीना के पास । सुबह की धूप उसे सोने की झलक जैसी जान पड़ी ।

पृथ्वी मिट्टी है । पृथ्वी कठिन है । सूर्य का आलोक सोना नहीं है, बड़ा उत्तप्त है । मनुष्य का सबसे बड़ा सर्वनाश उसकी आत्म-प्रवंचना में है । उसने अपने साथ जितना छल किया है, उससे अधिक और किसी ने नहीं किया । मिथ्या को सत्य समझ उसके पीछे घूमते-घूमते थककर एक दिन वह मुँह के बल गिरता है और हाहाकार करता हुआ मरता है । उसी मिथ्या के मोह से वह सोने को मिट्टी कहता है । मुख का कौर फेंक उपवास द्वारा निज को पीड़ित करता है ।

रीना की वह दृष्टि, वह स्तम्भित, विस्मय-भरा मुख आज भी उसे याद आता है ।

आसनसोल पहुँचकर रीना उसे सामने ही मिली थी । रेवरेण्ड अर्नेस्ट के बँगले के बाहर खड़ी उदाम दृष्टि से आकाश की ओर ताक रही थी ।

कृष्णेन्दु ने उल्लास से उच्छ्वसित होकर उसे दूर से पुकारा था, “रीना ! रीना !”

रीना चौंक गई थी । अस्फुट स्वर में कह उठी थी, “कृष्णेन्दु !”

“हाँ रीना, मैं कल बैप्टाइज़ हो गया। तुम्हें लेने आया हूँ। अब और कोई बाधा नहीं है। तुम मेरी हो ! यू आर माइन !”

रीना में विचित्र रूपान्तर होने लगा। कृष्णेन्दु उसका हाथ पकड़ते-पकड़ते ठिठककर रुक गया। रीना जाने कैसी हुई जा रही थी।

अपलक दृष्टि स्थिर हो गई—उसके मुख के ऊपर गड़ी हुई, तो भी मानो उसे देखती नहीं। उसके यौवन-माधुर्य से प्रदीप्त मुख पर कौनसे शब्द लिखे दीख रहे हैं; मस्तक पर, भृकुटी पर, दोनों ओठों पर हलकी रेखाओं में मन के स्तम्भित विस्मय के साथ-साथ और भी दुर्बोध्य कुछ प्रगट होता जा रहा है। उसमें विचित्र दृढ़ता है तथा विचित्र कुछ और है। महिमा ? हाँ वही।

धीरे-धीरे रीना ने कहा था, “तुम ईसाई हो गए ? मेरे लिए ?”

“हाँ, रीना।”

“अपने धर्म को, अपने ईश्वर को तुमने त्याग दिया ? मेरे लिए ?”

“रीना, क्या कह रही हो ?”

“तुम समझ नहीं पा रहे हो ?”

“समझ रहा हूँ। मैं तुम्हारे लिए प्राण दे सकता हूँ रीना !”

“लाइफ़ इज़ मॉर्टल। प्राण नश्वर हैं। एक दिन वह जायेंगे ही। असंख्य प्राण दिन-रात जा रहे हैं कृष्णेन्दु, जान-बूझकर आदमी मरता है, ज़हर खाता है, गले में फाँसी लगाता है, आदमी आदमी को मारकर स्वयं मरता है। कृष्णेन्दु, उस दिन यहाँ से थोड़ी ही दूर पर हज़ारी बाग़ में एक आदमी शेर को मारने के प्रयत्न में स्वयं शेर के हाथों मारा गया। जॉन क्लेटन शायद किसी युद्ध में गोली के सामने खड़ा होकर प्राण देगा। मजबूर होकर देगा। इस भाँति प्राण देना नशा है कृष्णेन्दु। मुझे प्रभु ने प्राण दिये हैं, ईश्वर के लिए, धर्म के लिए। मेरे लिए तुमने उसी धर्म को, अपने विश्वास के ईश्वर को छोड़ दिया कृष्णेन्दु। फ़ॉर ए गर्ल ? फ़ार दीज़ आइज़ ऑफ़ माइन द्विच यू सो एंडोर...!”

पहले तो कृष्णेन्दु रीना के इस आकस्मिक आक्रमण से विचलित

हो गया था। इस रीना को उसने आज पहली बार देखा। धर्मन्धिता में उग्र, पागल ! उसने अपने को संवरण करते हुए उसे रोककर कहा था, डोण्ट बी सिली, रीना।”

“सिली ?” प्रदीप्त हो उठी थी रीना।

कृष्णेन्दु ने भी दृढ़ स्वर में कहा था, “येस ! सिली। क्योंकि रीना, मनुष्य किसी एक धर्म का अवलम्बन करता है, उसका प्रतिक्रमण करके सार्वजनीन मानव-धर्म में दीक्षित होने के लिए। इस एक धर्म की कट्टरता और बन्धन में बन्दी की भाँति बँधे रहने के लिए नहीं।”

“येस। मानती हूँ। सुना है, पर समझ नहीं पाती। नहीं समझ पाती। इतना कह सकती हूँ कि जो लोग वहाँ पहुँचने की कोशिश करते हैं वे किसी एक व्यक्ति को पाने के लिए ऐसी तपस्या नहीं करते। वे तपस्या करते हैं सब मनुष्यों को आत्मीय रूप में प्राप्त करने के लिए। एक नारी के आगे अपने आपको समर्पण नहीं करते कृष्णेन्दु, सब लोगों के बीच अपने आपको विलीन कर देते हैं, ढाल देते हैं। ईश्वर बड़ा पवित्र है, बड़ा मूल्यवान है। उसका तुमने परित्याग कर दिया कृष्णेन्दु ? मेरे लिए ? नहीं, नहीं।”

“यह तुम क्या कह रही हो, रीना ?”

रीना फिर स्थिर दृष्टि से उसकी ओर ताकती रही।

“रीना !”

रीना ने कहा, “नहीं, मेरे लिए नहीं। जिस सौन्दर्य से तुम प्रेम करते हो उसी सौन्दर्यमयी एक नारी के लिए।” उसका गला रुँधता जा रहा था। इस बार आँखों से जल बह निकला।

कृष्णेन्दु ने व्याकुल होकर उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, “रीना....”

“छोड़ दो। लीव मी। डोण्ट टच मी। प्लीज...प्लीज !”

“रीना !”

निरुच्छ्वास क्रंदन के साथ रीना ने कहा था, “तुम भयंकर हो,

कृष्णेन्दु, तुम भयंकर हो। एक नारी के लिए तुम अपने ईश्वर को छोड़ सकते हो। कृष्णेन्दु, मुझसे सुन्दरी नारियाँ बहुत हैं। तो फिर उनमें से किसी को जब देखोगे, सम्पर्क में आओगे, उस दिन तुम मुझे भी तुच्छ वस्तु की भाँति छोड़कर चले जाओगे। ईश्वर, जिस ईश्वर को तुम इतने दिन अपना एकान्त आत्मीय मानते आये हो, जिसे प्यार करते रहे हो...! ओह ! तुम जाओ ! तुम जाओ ! मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। पर नहीं, विवाह मैं नहीं कर सकूँगी। तुम भयंकर हो !”

कृष्णेन्दु पत्थर हो गया ! स्थिर स्तब्ध भाव से खड़ा रहा। रीना ये शब्द कहकर ही बँगले के भीतर चली गई थी। बरामदे में वृद्ध पादरी खड़े हुए थे। शायद वे इन दोनों की बातचीत के बीच नहीं आना चाहते थे। अब वे उतर आये।

“यंग मैन !”

“गुड मॉर्निङ्ग, फ़ादर !”

“गुड मॉर्निङ्ग। बैठोगे—आराम करोगे ?”

“थैंक यू, फ़ादर ! बहुत-बहुत धन्यवाद ! इसकी ज़रूरत नहीं। मैं नैक्स्ट ट्रेन पकड़ना चाहता हूँ।”

वह बाहर निकलकर चला आया था।

वही रीना ब्राउन। जिसने इसके बाद वक्ष पर क्रॉस लटका लिया था और जो केवल होली बाइबिल ही पढ़ती थी, वही रीना ब्राउन। जिस रीना ब्राउन ने जीवन-भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की थी, वही रीना ब्राउन। उसने उन्मादिनी की भाँति शराब और व्यभिचार में अपने-आपको बहा दिया है। अमरीकी अफ़सर के जीवन के अरमान पूरा कर लेने के उच्छ्वल उल्लास में आत्म-समर्पण करके भटक रही है, बह रही है। शायद स्मृति भी नष्ट हो गई है।

‘अर्थिलो’ की बात भी उसके मन से मिट गई है। कहने से भी याद नहीं आती, भौंहें चढ़ाकर देखती रहती है, अन्तस्तल से सहन न कर सकने के इंगित तीखी दृष्टि में झलक उठते हैं।

और कृष्णेन्दु ? उसने कृष्णस्वामी होकर इस जंगली इलाके में रोगियों की चिकित्सा और कुष्ठ-रोगियों की सेवा में अपने-आपको विलीन कर दिया। रीना ने कहा था, “धर्म-विशेष को छोड़कर मनुष्य निर्विशेष मानव-धर्म में पहुँच गया है। मानव एक व्यक्ति के लिए नहीं, एक नारी अथवा एक पुरुष को पाने के लिए नहीं, सब मनुष्यों को आत्मीय रूप में पाने के लिए है।”

अब वह केवल रेवरेंड कृष्णेन्दु गुप्त नहीं है। वह ईसाई है, वह भारतीय संन्यासी है, वह रेवरेंड कृष्णस्वामी है। जिस ईश्वर की उपेक्षा करने के कारण रीना को उससे भय हुआ था, उस ईश्वर को पाना ही होगा। उसी को उसने खोजा है। उसका पता उसे मिल गया है।

मनुष्य की भौतिक देह में उन्हें उसने तपस्यारत देखा है।

चिद्विभ्रान्तिकारी महासत्ता। मनुष्य विराट् महासत्ता की दीक्षा लेगा। शुद्ध पवित्र ममता से कोमल, सत्य से निर्मल और प्रेम से परिशुद्ध अहिंसक। इस युद्ध के समय भी वह तपस्या को डुबाकर समाप्त नहीं कर सका। तामसी की भाँति वह उसे निगलने की कोशिश करके भी निगल नहीं सकी।

विचित्र विस्मय यह है कि उसे उसी ईश्वर की खोज में लगा देखकर रीना को आज भय हुआ, वह संकुचित हो उठी, हिंस्र हो उठी—मनुष्य को देखकर सरीसृप की भाँति।

आश्चर्य है, वह निर्मल आलोक-संधानी रीना—आज इस युद्ध में जो उन्मादिनी तामसी प्रकट हो रही है, जो सारी तपस्या को भ्रष्ट करना चाहती है, ईश्वर की हत्या करना चाहती है—उसी तामसी की क्रीतदासी है रीना, क्रीड़ा-संगिनी है, प्रेतनी है। बल्कि शायद उसी की प्रतीक है। हे भगवान् ! ओह गाँड !

रीना—अचानक जीप की गड़गड़ाहट से उनका विचार-सूत्र टूट गया। जीप ! वह त्रस्त हो उठे। जीप के साथ रीना का अस्तित्व मानो मन के भीतर जुड़ गया है—विजली की चमक के साथ मेघ-गर्जन की

भाँति । वह उठ खड़े हुए । अचानक नज़र पड़ी कि बँगले के मंदिर के छोर पर फौजी पोशाक पहने कोई घूम रहा है, बाइनाँकुलर से कुछ देख रहा है । प्रमोद-भ्रमण और उल्लास, उच्छृंखलता और उन्मत्तता । तामसी रीना साथ है । निश्चय । भयार्त्त की भाँति कृष्णस्वामी चल पड़े— पक्की सड़क पर नहीं, खेतों-खेतों आकर जंगली रास्ते पकड़ते हुए ।

छः

कृष्णस्वामी जंगल में होकर चले जा रहे थे। तेज़ चाल से ही चल रहे थे। बहुत देर हो गई है। कोई सात बजे होंगे। मरीज़ आकर बैठें होंगे। बीमार इंसान। उनका बस भगवान् ही है। ब्लैसिड आर दि पुअर इन स्पिरिट : फॉर देयर इज़ दि किंगडम ऑफ हैवेन। वे ही भक्त है। “नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।” भक्तों के हृदय में वास करता हूँ। वे लोग अशिक्षित होकर भी भगवान् की भक्ति करते हैं। अँधेरे में रहकर भी वे आलोक की कामना करते हैं। वे जीवन का प्रकाश बुझाकर अँधेरा नहीं करते। प्रकाश के अभाव में ही प्रकाश-प्रकाश कहकर रोते हैं। उनके भीतर ईश्वर की तपस्या है।

जंगल में कोई फूल खिला है। गन्ध उड़ रही है। पक्षी कलरव कर रहे हैं। सूरज आज बादलों के पीछे छिपा हुआ है। वनभूमि वर्षा की आशा में उन्मुख है। कृष्णस्वामी प्रत्येक पत्ते के भीतर उद्भिद प्राणों की व्याकुल प्रत्याशा का अनुभव करते हैं।

“हैलो, डू यू हियर ? हैलो ?”

कृष्णस्वामी चौक उठे। नारी का कण्ठ-स्वर, रीना ब्राउन की आवाज़ इस जंगल में ? इतनी सवेरे ? इधर-उधर ताकने पर कृष्णस्वामी ने देखा कि रीना ब्राउन जंगल के भीतर एक खुली जगह में एक अकेले बड़े शाल वृक्ष के तने का सहारा लेकर बैठी है। पास में एक फ्लास्क रखा है, हाथ में सिगरेट हैं। पोशाक वही है।

कृष्णस्वामी ने सिर्फ कहा, “येस ?”

“कम हियर, सिट डाउन । हैव ए ड्रिन्क, ए स्मोक ।”

“आई डोण्ट ड्रिन्क, आई डोण्ट स्मोक । थेन्क यू ।”

अब रीना चीख उठी, “कृष्णेन्दु !”

कृष्णस्वामी ने हँसकर कहा, “मेरे रोगी बैठे होंगे रीना, मैं चलूँ । मुझे क्षमा करो ।” उसके बाद फिर बोले, “तुमने पहचान लिया रीना ? कल सोचा था कि तुम्हारी स्मृति भी क्षीण हो गई है ।”

“हो गई है । बहुत-कुछ हो गई है । पर ‘आँखेलो’ नहीं भूल सकी । ‘नेट मी लुक ऐट युअर आइज़, लुक इन माइ फ़ेस’ कहकर जैसे ही तुमने मेरी ओर देखा, तभी मैं तुम्हारी दृष्टि को पहचान गई थी, पर...”

रीना सिगरेट का कश खींचने लगी । बहुत शराब पीने के कारण उसकी उँगलियाँ काँप रही थीं ।

“मैं चलूँ रीना ।”

“तुम यहाँ क्या कर रहे हो ? यह कौसी पोशाक है ? यह क्या चेहरा बना रक्खा है ?”

“मैं क्रिश्चियन संन्यासी हूँ रीना । भारतवर्ष का संन्यासी । संन्यासी होकर जो किया जाता है, वही कर रहा हूँ । ईश्वर को खोज रहा हूँ । अवश्य ही, मनुष्य की सेवा में से । मैं डाक्टर हूँ, बीमार होने पर उनका इलाज करता हूँ । पर असली इलाज कुष्ठ-रोगियों की चिकित्सा का ही है ।”

रीना के हाथ से सिगरेट गिर पड़ी । एक लंबी साँस छोड़ते हुए बोली, “जीवन नष्ट कर रहे हो कृष्णेन्दु । आइ ऐम दि काँज आइ ऐम दि काँज...”

“नहीं, मेरा जीवन नष्ट नहीं हुआ ।”

“आइ ऐम ग्लैड ।”

“मैं चलूँ । गुड बाई ।”

“एक मिनट । मेरी कोई बात नहीं पूछोगे ?”

“नहीं, तुम्हारा हाल तो तुम्हारे रूप से ही प्रकट है रीना । और

क्या पूछूँ ?”

“ईश्वर नहीं है कृष्णेन्दु । मैंने तुमसे गलत कहा था । दुःख पहुँचाया था । ईश्वर नहीं है ।”

रीना ब्राउन उठकर खड़ी हो गई । “मैं कहती हूँ, ईश्वर नहीं है । नथिंग इज सिन—पाप नहीं, ईश्वर नहीं ।”

उसका कण्ठ-स्वर तीव्र हो उठा ।

“तुम यह सब छोड़ दो कृष्णेन्दु । जीवन को नष्ट मत करो । लौट जाओ, नया जीवन आरम्भ करो ।”

“तुम्हारे साथ ?”

रीना ब्राउन ‘ही-ही’ करके हँस उठी । तीव्र तीक्ष्ण वीभत्स हँसी । हँसी रोककर बोली, “मेरा दाम बहुत है कृष्णेन्दु । तुम्हारा दाम मेरे लिए उस दिन से भी कम । उस दिन भय हुआ था । आज करुणा होती है । हार्मलेस, डोसाइल, वर्थलेस, आस्तिक, ईश्वर-खोजी तुम, निर्बोध तुम, मूर्ख तुम, मेरी घृणा के भी पात्र नहीं हो, करुणा के पात्र !”

कृष्णस्वामी ने और कोई बात नहीं कही, आगे बढ़ गए ।

पीछे से तीव्र चीत्कार करके रीना बोली, “सुनो मेरी बात । सुनो । यू मस्ट लीव दिस प्लेस । यहाँ तुम नहीं रह सकोगे । चले जाओ । बहुत दूर ।”

कृष्णस्वामी घूमकर खड़े हो गए ।

रीना की ऐसी तीव्र उग्र मूर्ति उन्होंने कभी नहीं देखी थी । उसकी घनी काली बड़ी-बड़ी बरौनियों की स्वप्निल वेष्टनी के भीतर जड़ी हुई काली आँखें ऐसी ज्वलंत हो सकती हैं, यह उनके लिए कल्पनातीत था । उसकी दोनों आँखें जल रही थीं, भकभक कर रही थीं ।

रीना ने कहा, “तुम्हारा वह बँगला मुझे चाहिए । मैं वहाँ रहूँगी । बहुत दिन रहूँगी । तुम्हें मैं सहन नहीं कर सकती । तुम्हें यह इलाक़ा छोड़कर चले जाना होगा । यू मस्ट । नहीं तो मैं उन्हें भड़का दूँगी । वे लोग तुम्हें, वे लोग क्यों, मैं ही तुम्हें गोली मार दूँगी ।”

कृष्णस्वामी कोई उत्तर न देकर चुपचाप फिर चल पड़े। फिर नहीं लौटे। भय उन्हें हुआ—अपने लिए नहीं, उस भुमकी के लिए, और सिन्धु के लिए।

रीना ब्राउन प्रेतिनी की भाँति पेड़ के नीचे खड़ी शायद निष्फल आक्रोश में उबल रही है, शायद फ्लास्क खोलकर शराब पी रही है, यह अनुमान करने में उन्हें तनिक भी विलम्ब नहीं हुआ।

उन्होंने तय किया कि भुमकी और सिन्धु गाँव के भीतर जाकर रहेंगी। लालसिंह उनकी रक्षा करेगा। वह भी चला जायगा। वह अकेले रहेंगे।

उन्हें कोई भय नहीं। भय कृष्णेन्दु को कभी भी नहीं रहा। कृष्ण-स्वामी होकर ईश्वर को खोजते फिरते हैं। उन्हें मृत्यु से क्या भय होगा? आये मृत्यु। अन्याय का सामना करते हुए वे मरेंगे। प्रेतिनी रीना ब्राउन के भय से वे भाग निकलेंगे?

रात के नौ बजे होगे। वह बैठे हुए थे। हर जीप अथवा मोटर की आवाज से थोड़े सजग हो उठते थे। बीच-बीच में दीर्घ निस्तब्धता के बीच मेघाच्छन्न आकाश की ओर देखकर सोचने लगते थे। आकाश वर्षा के बादलों से भर उठा है। आज शायद बारिश होगी। क्षितिज पर हलकी-सी बिजली चमक रही है। पर वह यह बात नहीं सोच रहे थे। सोच रहे थे निष्कलुष पवित्रता की प्रतिमूर्ति रीना की बात। प्रेतिनी रीना ब्राउन की बात। प्रेतिनी नहीं, साक्षात् तामसी हो उठी है आज रीना ब्राउन।

रात तामसी नहीं है। रात के अँधेरे में जीवन के भीतर से ही तामसी निकलकर आती है। भौतिक जगत् में विक्षोभ के कारण बिना, अनियम हुए बिना, वह नहीं जागती। विक्षोभ मिटते ही वह शान्त हो जाती है, स्थिर हो जाती है। जीवन के भीतर ही वह सदा जागृत है, चेतना के भीतर ही वह दिन-रात सक्रिय है। सुप्ति के बीच वह एक दुःस्वप्न है; अवकाश-विश्राम के बीच वह कुटिल कल्पना है। वह मनुष्य

को शान्ति के रास्ते पर, सुख के रास्ते पर, चैतन्य के रास्ते में नहीं बढ़ने देगी। निष्ठुर आक्रोश से अजगर की भाँति पीछे से खींचती रहती है, निगलना चाहती है। एक बार पकड़ लेने पर निगले बिना शान्त नहीं होगी।

उस समय प्रायः आधी रात बीत चुकी होगी। कृष्णस्वामी को भपकी-सी आ गई थी। टॉर्च की रोशनी में भपकी टूट गई। वे उठकर बैठ गए।

“कौन ?”

दूर क्षितिज पर बिजली चमक उठी। उस क्षणिक प्रकाश में उन्होंने देखा, हाँ सचमुच वही है। दीर्घांगी नारी-मूर्ति बढ़ी आ रही है। थोड़ी-थोड़ी लड़खड़ा रही है। रीना ब्राउन ने उत्तर दिया, “मैं ! देखती हूँ तुम मेरी प्रतीक्षा कर रहे हो !”

“कर रहा हूँ। सिर्फ तुम्हारी ही नहीं, तुम्हारे साथ और भी लोगों की प्रतीक्षा कर रहा था, जो लोग मुझे डराते, यह घर छोड़कर चले जाने के लिए कहते। मैं समझ गया हूँ कि इस मकान की चाहे इतनी जरूरत तुम्हें न हो, पर उससे भी अधिक तुम्हें मुझे यहाँ से भगाने की जरूरत है। तुम्हें चैन नहीं मिल रहा है। पर क्यों ?”

एक कुर्सी पर बैठकर रीना बोली, “यू मस्ट गो अवे फ्रॉम हियर। तुम्हें जाना ही पड़ेगा।”

“नो। आई मस्ट नॉट गो। मैं ईश्वर की साधना में शपथ लेकर यहाँ आया हूँ।”

“स्टॉप !” रीना चीख उठी। आसमान के बादलों की ओर देखकर वह बोली, “सब भूठ है। ईश्वर नहीं है। कभी था या नहीं, मैं नहीं जानती। था भी तो वह मर चुका है। इंसान ने उसे मार डाला है। मेरी ओर देखो। मैंने उसे मार डाला है। आदिम युग के मनुष्य की भाँति उसके शव को ममी की भाँति चिपकाकर मत बैठो। जो मर चुका है वह बच नहीं सकता।”

“तुम आज चाहे जो हो गई हो रीना, तुम ईसाई हो ।”

“नहीं, नहीं, नहीं । मैं ईसाई नहीं हूँ ।”

“रीना !”

“कभी नहीं थी । अपना क्रॉस, अपनी बाइबिल मैं फेंक चुकी हूँ । मैं कभी बैप्टाइज नहीं हुई । मेरे पिता ने मुझे कभी दीक्षा नहीं लेने दी । मेरा कोई धर्म नहीं । पिता चार्ल्स ब्राउन अंग्रेज थे, धर्म से ईसाई । पर अत्याचारी जमींदार । मेरी माँ हीदेन, हिन्दुओं में भी जंगली अछूत जाति की स्त्री । वासना पूरी करने के लिए पिता ने उसको उप-पत्नी के रूप में रखा था, उसको खरीद लिया था । मैं उन्हींकी जारज सन्तान हूँ । कृष्णेन्दु, वही आया, वही कुन्ती मेरी माँ थी ।”

बिजली की चमक के साथ मेघ-गर्जन ठीक उसी क्षण रीना की बात की प्रतिध्वनि की भाँति गूँज उठा । कृष्णेन्दु वज्राहत की भाँति स्तम्भित हो गया । कोई बात, एक विस्मय सूचक मर्मन्तिक ध्वनि तक उसके मुँह से नहीं निकली । रीना हँस उठी । अचानक हँसी रोककर कन्धे पर लटके हुए फ्लास्क से थोड़ी-सी शराब पीकर बोली, “और सुनोगे ? और भी बहुत है । मेरी वह माँ कुन्ती, वह उसी मेदिनीपुर में, जहाँ ब्राउन की जमींदारी थी, वहीं के जंगली इलाके के एक पुराने क्षत्रिय ठेकेदार की रखैल की, एक ऐसी ही जंगली स्त्री की, लड़की थी । ठेकेदार की रखैल एक ब्राह्मण के व्यभिचार का फल थी । और भी सुनोगे ? काली औरतों के रक्त के साथ बहुत-सा गोरे रंग के लोगों का रक्त भी मिल गया था । सबके अन्त में गोरे अंग्रेज का रंग ! यह सारा मेरे भीतर प्रकट हुआ । काले बाल, बड़ी-बड़ी आँखों की पलकें, काला रंग । रंग-रूप मेरा जो भी हो, मेरा क्या कोई धर्म है, मेरा क्या कोई ईश्वर है ? ईश्वर की, धर्म की मैं जीवन्त समाधि हूँ । मृत ईश्वर मेरे भीतर सड़ रहा है । बदबू उठ रही है ।”

अचानक रीना शान्त हो गई । कुछ देर स्तब्ध भाव से ही बैठी रही ।

कृष्णस्वामी को लगा कि उसकी आँखें भर आई हैं। उन्होंने कहा, “तुम रो रही हो ?”

“रो रही हूँ ? लुक,” उसने टार्च जलाकर अपने मुख पर डाला। नहीं, रीना रोई नहीं थी। उसकी दोनों आँखें नशे से लाल थीं। दृष्टि असहनीय तीव्र थी।

“मेरी आँखों का पानी बहुत दिन पहले सूख चुका है। मरुभूमि हो गई हैं वे। बहुत रोने से पानी खत्म हो चुका है।”

धीरे-धीरे रीना ने कहा, “सब तुम्हारे कारण कृष्णेंद्रु, यू आर दि कॉज़, यू आर दि कॉज़। आज खुल्लम-खुल्ला तुम्हारा नाम लेकर ही कहती हूँ, यू आर दि कॉज़।” रीना थोड़ा हँसी। शायद ‘आँधेलो’ के उस दृश्य के अभिनय की सुखद स्मृति ने क्षण-भर के लिए थोड़ी-सी मधुरता का संचार कर दिया।

“तुम्हारे-जैसे प्रिय व्यक्ति को लौटा दिया था, केवल इसलिए कि तुम ईश्वर में, धर्म में हृदय से विश्वास नहीं करने थे। कल तुम्हारे साथ भेंट होने के बाद से ही सोच रही हूँ कि उस दिन स्वयं को छोड़कर अपने ईश्वर को, अपने सारे धर्म को तुम्हें दे दिया था। मेरे अनजान में ही तुम मेरा सब-कुछ छीन लाए थे।”

फिर कुछ देर शान्त रहकर बोली, “आसनसोल से लौट आई। ईश्वर और धर्म से मुझे इतना प्रेम था कृष्णेंद्रु, कि अन्तर में हाहाकार उठने पर भी मैं रोई नहीं। संकल्प किया था कि सारा जीवन ‘नन’ होकर काट दूँगी। ब्राउन साहब ने—उसे पिता कहते मुझे घृणा होती है कृष्णेंद्रु, तुम्हारे बारे में पूछा। ‘वह कहाँ है ?’ मैंने कहा, ‘मैंने उसे अस्वीकार कर दिया।’ उसने पूछा, ‘क्यों ? वह ईसाई हो गया है, तुम यह नहीं जानती ? उसने तुम्हें नहीं बताया ?’ मैंने कहा, ‘बताया है।’ उसने पूछा, ‘तो फिर ?’ मैंने तुमसे जो-कुछ कहा था सब उसे बता दिया। कृष्णेंद्रु, एक पल में उसका मुखौटा उतर गया। चीखकर बोला, ‘बैस्टर्ड... बिच !’ उसके बाद अनर्गल, गन्दी अश्लील गाली-गलौज।

बोला, 'क्रिश्चियन यू क्रिश्चियन ? इ यू नो, वह हीदेन कुन्ती, बल्कि हीदेन लोगों से भी अधिक घृणित—लगातार तीन पीढ़ियों से बैस्टर्ड—वही तेरी माँ है ?' बोला, 'जिन्दगी में पल-भर की दुर्बलता ने मुझे इतनी बड़ी गलती करा दी । तेरा गोरा रंग देखकर मैं भूल गया । तुझे बचाकर रखा !'

रीना ने एक सिगरेट सुलगा ली । उसके बाद फिर बात शुरू करते ही ठिठककर आकाश की ओर देखती हुई बोली, "इट्स रेनिंग । पानी बरसने लगा ।" हँसकर बोली, "मेरी कुन्ती माँ कहा करती थी, अरे मेह आ गया !"

कई-एक बड़ी-बड़ी वूडें कृष्णस्वामी के माथे पर, हाथ पर आकर गिरीं । दूर से साँ-साँ की आवाज़ उठ रही थी । बरसात का जल-प्लावन । मृदु मन्द हवा वह रही है ।

कृष्णस्वामी ने कहा, "भीतर चलो रीना !"

"कमरे के भीतर ? चलो ! पर उसकी ज़रूरत ही क्या है ? मैं चलती हूँ । बस इतना कहे जाती हूँ, तुमसे कह चुकी हूँ और फिर कह रही हूँ, यहाँ से तुम्हें चले जाना होगा । मुझे चैन नहीं मिल रहा है । यू मस्ट ।"

"वह सब होगा रीना ! पर इस बारिश में, रात के अँधेरे में, कहाँ जाओगी ?"

"भीगती-भीगती चली जाऊँगी । मुसीबत मुझे अच्छी लगती है, कृष्णोन्दु ! पहले आँधी-पानी से डर लगता था । अब आनन्द मिलता है । आई फ़ियर नो डार्कनेस, आई फ़ियर नो स्टॉर्म, आई फ़ियर नो थंडर, लेट मी गो । बट यू मस्ट लीव दिस प्लेस ।"

"नहीं, नहीं, बैठो !"

कमरे के भीतर आकर मद्धिम लालटेन को कृष्णस्वामी ने ऊँचा किया ।

"नो," कहती हुई रीना ने आकर रोशनी को कम करके बुझा दिया ।

बत्ती गिर गई। “अँघेरा...अँघेरा अच्छा है। जानते हो, ब्राउन से सारी बात सुनने के बाद तीन दिन तक मैं अँघेरे में पड़ी-पड़ी रोती रही थी। दर-वाजे, खिड़कियाँ बन्द कर ली थीं। रोशनी नहीं जलाई थी। अपनी ओर ताकने में मुझे भय होता था। और मेरे साथ-साथ लगातार रोती थी मेरी माँ कुन्ती। ब्राउन से मैं घृणा करती हूँ। कुन्ती से घृणा नहीं कर सकती। हतभागिनी ! ब्राउन के डर से भयभीत मूक जन्तु की भाँति आजीवन मेरी आया बनकर रही, किसी दिन मुझे बेटी कहकर एक बूंद स्नेह-श्रद्धा मुझसे न माँग सकी। अँघेरे में हम दोनों रोती थीं। अपने कलंक के भय से—मेरी माता के परिचय की बदनामी बाद में उसे लगे, मुझे लगे, इस लज्जा से—ब्राउन ने मुझे ईसाई धर्म में दीक्षित तक न किया था। मुझे नर्सरी में भेज दिया था। किन्तु मेरी माँ के पास तब भी रूप-यौवन था। उस रूप में एक वन्य आकर्षण था। विचित्र था वह आकर्षण। मेरे बालों में, आँखों में, पलकों में उसकी छाप मौजूद है। उसे भी ब्राउन ने निकाला नहीं। उसे तो उसने खरीद ही लिया था। उसका भोग करता था, बर्बर की भाँति। क्रिश्चियन ! क्राइस्ट ! सन ऑफ गॉड वह थे, क्रास पर विधकर मारे गए थे। उन्हें रोमन साम्राज्यवादियों ने मार डाला था। लोगों का विश्वास है कि वह फिर से जीवित हुए थे। हुए भी हों तो साम्राज्यवादी अभी मरे नहीं हैं। वे उन्हें नित्य क्रास पर लटकाकर मार रहे हैं।”

रीना हँसी। हँसकर बोली, “पर ये लोग एक जगह महान् हैं। क्लेटन ने मुझसे ब्याह करना चाहा था, पर इस शुद्ध अंग्रेज ज़मींदार ने अपनी संभ्रांतता कायम रखते हुए मेरा सारा हाल उसे बता दिया था। क्लेटन के पिता ने ब्राउन को धन्यवाद दिया था। तुम हीदेन हो इसलिए तुम्हें सच बात बताने की ज़रूरत भी उसने नहीं समझी। मैं ईसाई नहीं हूँ, तो भी तुम्हें ईसाई बनाये बिना मेरे साथ विवाह करने की अनुमति नहीं दी। मैं हीदेन के गर्भ से उत्पन्न लड़की हूँ, मुझे खेलने के बहाने बाईबिल और क्रॉस दिया था।

बाहर अब मूसलाधार वर्षा होने लगी थी। चारों ओर के विशाल सुदीर्घ शालवन के पत्तों पर पानी गिरने के शब्द से चारों ओर मेघ-मल्लार-जैसा संगीत बज उठा था—विचित्र भरता हुआ-सा संगीत। संसार के ओर सब शब्द डूब गए थे, यहाँ तक कि जीप अथवा मोटर की आवाज भी अच्छी तरह नहीं सुनाई पड़ती थी।

अचानक रीना उठ पड़ी। वह खिड़की के पास जाकर खड़ी हो गई। खिड़की में से बाहर की ओर ताकती हुई रुक-रुककर कहने लगी, “कितनी सुन्दर रात है ! लगता है इस संसार में तुम्हारे और मेरे सिवा और कोई नहीं है, कुछ नहीं है।”

कृष्णस्वामी स्तब्ध होकर रीना की कहानी सुनते-सुनते वैसे ही स्तब्ध बैठे थे। वेदना और करुणा से उनका अन्तर अवसन्न हो गया था। बाहर की उस सजल हवा के प्रवाह की भाँति हाय-हाय कर रहा था। वैसे ही रो भी रहा था। हे भगवान्, तुम उसके अन्तर में फिर से जाग उठो ! उसके हृदय की समाधि को तोड़कर जाग उठो ! अपने स्पर्श से, कुष्ठ रोगी के निरोग होने की भाँति ही कठिन आघात से विकृत व्याधिग्रस्त अन्तर को स्वस्थ सुन्दर बना दो ! रीना सुन्दर है, अब भी सुन्दर है। आज भी उसके सर्वांग में वही माधुरी है, आज भी उसकी दीर्घ घनी काली पलकों में जड़ी हुई दोनों काली आँखें मान-सरोवर की भाँति स्वच्छ और गम्भीर है। आज भी उसने आकाश की नील आभा को प्रतिबिम्बित करने की शक्ति नहीं खोई है। तुम बादलों को काट दो, हटा दो। हे ईश्वर !

धीरे-धीरे आगे आकर उन्होंने कहा, “रीना, तुमने बराबर ईश्वर की समाधि रचने की चेष्टा की है, ईश्वर-विरोधी शक्ति की। आलोक और कालिमा। भला और बुरा। पर बार-बार बुराई हारी है और भलाई जीती है। ईश्वर उस समाधि को तोड़कर फिर से आविर्भूत हुए हैं। हाय रीना, तुमने बहुत दुःख पाया है, बहुत वेदना भेली है। मेरा दुर्भाग्य है कि मैं उस समय दूर था। मुझे पता चलता तो ये दुःख तुम्हें न सहने

देता । कहता—जीवन, वह तो ईश्वर का अंश है । सृष्टि के भीतर मनुष्य के जीवन द्वारा ही भगवान् बात करते हैं, हँसते हैं, रोते हैं, प्यार करते हैं, स्वयं अपनी बलि देते हैं । विश्व के आगे अपने-आपको समर्पित करते हैं, मनुष्य के भीतर ही वे प्रत्यक्ष हैं । मनुष्य के भीतर जीवन, वह चाहे जहाँ पैदा क्यों न हो, सब जगह पवित्र है । ब्राह्मण नहीं, चंडाल नहीं, ईसाई नहीं, हीदेन नहीं, धनी नहीं, दरिद्र नहीं । गोत्र, कुल, इतिहास का परिचय हो या न हो, मनुष्य सदा एक-सा पवित्र है, उसके भीतर से ईश्वर सदा एक-सी महिमा में आत्माभिव्यक्ति के लिए व्याकुल रहते हैं । तुम्हारे साथ मैं परम आनन्द से यह तपस्या करता ।”

फिर पीठ पर हाथ फेरकर बोले, “जिस ईश्वर को तुम समाधिस्थ कर दिया बताती हो वह फिर उठेंगे । तुम शान्त हो जाओ !”

“डोण्ट टच मी प्लीज । डोण्ट । डोण्ट, कृष्णेन्दु ! मुझे मत छुओ !” रीना चीख उठी । वह जैसे कोई आर्त्तनाद था ।

“पीस एण्ड बी स्टिल, रीना !” ऑर्थेलो की याद दिलाकर कृष्ण-स्वामी ने उसके हृदय में स्वप्नावेश की स्निग्धता का संचार करने की चेष्टा की ।

पर रीना अधीर कण्ठ से बोली, “मेरे लिए शान्ति नहीं । मैं स्थिर नहीं हो सकूंगी कृष्णेन्दु ! तुम नहीं जानते । उन सबके ऊपर किसी तरह भी मेरा कोई अधिकार नहीं बचा है । मेरा अन्तर सड़ गया है । मेरे ऊपर शैतान ने कब्जा कर लिया है । बहुत कोशिश कर चुकी हूँ, पर कोई बस नहीं चलता । असह्य क्रोध से मेरा हृदय पागल हो उठता है, शरीर में प्रचण्ड विक्षेप जाग उठता है । मुझसे रोया नहीं जाता । ब्राऊन के ऊपर क्रोध और आक्रोश से मैं बाहर निकल पड़ी थी । बाइ-विल को फेंक दिया था । तुमसे भेंट हो जाने के भय से एक जघन्य मोहल्ले में जा छिपी थी । साथ में मेरी माँ थी । वह भी ठीक इस रात जैसा ही था—अन्धकारपूर्ण, मूक ! पाप करो, पुण्य करो, किसी का कोई प्रतिवाद नहीं, नियन्त्रण नहीं, वरन् नीरव प्रश्रय है । काले कपड़े की

कालिमा में सारे अंग ढक जाते हैं, उजागर नहीं होने पाते । मैंने यह जीवन रिपन स्ट्रीट के इलाके में शुरू किया, 'नाइट डैन' का जीवन, फिटनों के कोचवान, डेन के बेयरे जिसके परिचालक थे । वहाँ से एक होटल में जा पड़ी । होटल से इस लड़ाई के जमाने में देह बेचती फिर रही हूँ । उन लोगों ने मुझे बाँध रखा है ।”

“रीना !” कृष्णस्वामी सिहर उठे ।

“नहीं । किसी को दोष नहीं देती । सब मेरे कर्मों का फल है । मेरा अन्तर मर गया है कृष्णोन्दु; वहीं कब्र के नीचे तुम भी दब गए हो, ईश्वर दब गया है, ईश्वर का पुत्र दब गया है । मैंने अपने हाथों दबा दिया है ।”

“रीना !” कृष्णस्वामी ने उसका हाथ अपनी ओर खींच लिया ।

“मुझे चाहते हो ? प्रेम नहीं, देह दे सकती हूँ मैं । प्राण नहीं; मन नहीं । मन चला गया । प्रेम भी नहीं है । चाहते हो तुम ?”

कृष्णस्वामी ने हाथ छोड़ दिया । बोले, “भगवान् तुम पर दया करें...”

“नो ! नो ! नो ! वह नाम मत लो !”

“मेरे हुए से तुम्हें क्या भय है ?”

“भय नहीं, घृणा है । सुनो कृष्णोन्दु, तुम यहाँ रहोगे तो मुझे चैन नहीं मिलेगा । तुम्हें यहाँ से जाना ही होगा । तुम जाओ कृष्णोन्दु ! नहीं तो शायद मैं तुम्हें गोली मार दूंगी । अथवा वे लोग मार देंगे । यदि उन्हें यह मालूम हो गया कि तुम्हारे कारण मैं चली जाऊँगी तो वे क्षमा नहीं करेंगे ।”

कृष्णस्वामी अँधेरे में ही दीवार पर जिधर क्रॉस-विद्ध यीशु की एक मूर्ति टँगी हुई थी, उधर देख उठे । हे अविनश्वर । अपने-आपको प्रकट करो !

“कृष्णोन्दु, जाओगे या नहीं, बोलो !”

“नहीं ।”

“नहीं ?”

“नहीं ।”

“क्यों ? किसलिए ? मेरे लिए ? मेरी देह चाहते हो ?”

कानों में उँगली डालते हुए कृष्णस्वामी ने कहा, “नहीं । तुम्हारी देह लेकर क्या करूँगा ? “येनाहं नामृता स्याम् किमहं तेन कुर्याम् ।” साथ-साथ अँग्रेजी में अनुवाद करते हुए कहा, “उसका क्या होगा ?”

“तो फिर क्यों ? किसलिए ?” रीना चीख उठी ।

“टु बी क्रूसफ़ाइड अगेन ।”

कहते-कहते ही उन्होंने रीना के हाथ से टॉर्च लेकर जलाई । क्रास विद्ध यीशु की मूर्ति आलोकित हो उठी ।

अगले ही क्षण रीना ने बड़ी तेजी से कुछ खींचकर बाहर निकाला । पिस्तौल । पिस्तौल उठाकर गोली चला दी । मूर्ति टूटकर गिर गई ।

अगले क्षण पथभ्रष्ट उल्का की भाँति रीना बाहर निकल गई थी । बाहर से सुनाई पड़ा, “कल तुम्हें जाना होगा, यू मस्ट, ऑर यू डाई ।”

आश्चर्य है, अगले दिन से रीना फिर दिखाई नहीं दी ।

कृष्णस्वामी कितने ही दिन प्यारा-डोवा गये, कितने ही दिन मोरार की सड़क के चौराहे पर खड़े रहे, कितने ही दिन तक रामचरन के फाटक पर बिना प्रयोजन ही जाकर बैठते रहे । कितनी जीपें आईं, कितनी विलासिनी स्त्रियाँ गईं । पर रीना उनमें नहीं थी ।

रामचरन और रामचरन के बेटे ने कहा, “वह मेम कहाँ चली गई बाबा साहब ?”

कृष्णस्वामी क्या बताएँ ?

कहते, “कौन जाने !”

कौन जाने, वह कहाँ है ! शायद किसी दूर देश में, सुदूर विस्तृत युद्ध-क्षेत्र की सीमा पर रीना तामसी उल्का की भाँति तड़पती भटक रही है । कौन जाने !

सात

पृथ्वी केवल जल और मिट्टी नहीं है। समुद्र, वन, पहाड़—इसीके बीच पृथ्वी की सीमा समाप्त नहीं हो जाती। उसका एक ऊर्ध्व लोक भी है। आकाश में जितनी दूर तक मध्याकर्षण विस्तृत है, वहाँ तक उसकी सीमा है। फिर मिट्टी के वक्ष के भीतर, अँधेरे गह्वर में उसका एक अधोलोक भी है। पेड़ की जड़ रहती है मिट्टी के नीचे, फूल खिलते हैं आकाश में। पक्षी पंख फैलाकर आकाश में उड़ते हैं। आकाश में पहुँचकर और भी, और भी ऊपर उठना चाहते हैं। पर उनका नीड़ मिट्टी के वक्ष में अटके हुए वृक्ष की डाल पर है, वहाँ उसे उतरना ही होता है। सरीसृप मिट्टी के वक्ष के अँधेरे गह्वर में रहते हैं। उन्हें बाहर मिट्टी के ऊपर निकलकर आना होता है—वायु के लिए, आहार के लिए, प्रकाश के लिए।

कृष्णस्वामी का मन विहंग की भाँति आकाश-विहारी है। आलोक, और भी अधिक आलोक के लिए उसने पंख फैला दिए हैं। रीना ब्राउन ने ही एक दिन यह पंख फैलाने की आकांक्षा जगाई थी। मनुष्य के जीवन में घात-प्रतिघात की यह शक्ति कितनी विचित्र है ! पिता जेम्स ब्राउन के आघात से वही रीना ब्राउन अँधेरे गह्वर में सरीसृप बन गई। बचपन में किसी पुराण में पढ़ा था कि कोई राजा किसी के अभिशाप से अजगर हो गया था। माँ से काजलहारा की कहानी भी सुनी थी। काजलहारा ठीक रीना की भाँति स्फटिक की बनी लड़की थी। उसकी सौत ने उसे जादू की लकड़ी से साँपिनी बना दिया था। ब्राउन ने घृणा और अमर्यादा की लकड़ी के आघात से उसे ठीक साँपिनी ही बना

दिया है ।

पर पक्षी को भी तो धरती के वक्ष पर उतरना पड़ता है । सरीसृप को भी धरती के ऊपर आना होता है । अचानक दोनों की भेंट हो गई । ठीक वैसा ही । कृष्णस्वामी का रीना ब्राउन के इस जीवन से संपर्क ठीक वैसा ही है । अंधेरी रात में सरीसृप-रूपिणी रीना विहंग कृष्णस्वामी के नीड़ में आकर अपनी विषैली साँसों के गर्जन से उन्हें धमकाकर चली गई । फिर भेंट नहीं हुई ।

कृष्णस्वामी कई दिन तक अंधेरी रात में सरीसृप की प्रतीक्षा करते रहे, पर वह फिर कभी नहीं आई । कहाँ किस सुदूर स्थान में नये अंधेरे बिहार की खोज में वह चली गई है ? कृष्णस्वामी ने आकाश में अपने पंख फैला दिए । ऊपर, और ऊपर उठेंगे । रीना अपने रास्ते चली गई है, वह अपने रास्ते चलेंगे । केवल बीच-बीच में, आकाशचारी विहंग की धरती पर पड़ने वाली दृष्टि की भाँति, रीना की बात याद आने पर दिगंत की ओर ताककर भगवान् से उसके मंगल की कामना करते । कल्याण करो भगवान् । रीना के चित्त को स्वस्थ करो, शान्त करो ! कुष्ठ-रोगी तुम्हारे पास आया, तुमने उसे छुआ, उसे नवजीवन प्राप्त हुआ । उसी प्रकार रीना के चित्त को स्वस्थ करो ! कहो, “बी दाउ क्लीन !” फिर कुछ क्षण बाद रीना की चिन्ता छोड़कर अपने-आपको काम में डुबो देते हैं । असमय ही साइकिल लेकर निकल पड़ते हैं । गाँव-गाँव भटकते फिरते हैं ।

“कैसे हो तुम लोग सब ? एँ ? अजी महाशयो !”

“अच्छे कहाँ बाबा साहब ? भूखा रहकर बचता है इंसान ! पेट में राच्छस घुस गया है । लड़के, लड़की, जानवर—सब ।”

“देखता हूँ, देखता हूँ, एस० डी० ओ० से बात करके देखता हूँ ।”

“किरोसिन तेल और कपड़े की बात कहना बाबा ।”

“कहूँगा, पर अभी किसी का हाथ तो नहीं देखना है ?”

“यही छोटी-मोटी बीमारी है, यह क्या देखेंगे ?”

“उस बच्चे की पीठ पर वह दाग कैसा है जी ? देखूँ, देखूँ ।”

सप्तपदी : ताराशंकर बंधोपाध्याय : ६१

अचानक एक लड़के की पीठ पर गरदन के पास एक फीके सफ़ेद दाग पर नज़र पड़ गई थी। “देखूँ रे लड़के, इधर आ, इधर आ, सुन, सुन !”

“जाता क्यों नहीं रे, हरामजादा बज्जात। दिखाता क्यों नहीं ?”

देख-भालकर कहते, “तभी तो महाशय जी, कैसा पारे-जैसा लग रहा है ! इसे तो दिखाना चाहिए। क्यों नहीं ले आते मेरे यहाँ ! अच्छी तरह से जाँचकर देखूँगा।”

और फिर चल पड़ते हैं। कुष्ठ को फैलते देखकर मन-ही-मन चिंतित होते हैं, वेदना अनुभव करते हैं। और सब-कुछ भूल जाते हैं।

कृष्णस्वामी के पास शुरू से ही अपना एक माइक्रोस्कोप है। विद्यार्थी-जीवन में जब अपने मित्र के साथ उनके नीचे रहकर प्रैक्टिस करते थे, तब ही से है। क्लेटन ने कम दामों में जुटा दिया था। चोरी का माल है यह जानते हुए ही कृष्णेन्दु ने खरीदा था। उस समय वह विद्यार्थी-जीवन का कृष्णेन्दु था। उसे कोई दुविधा नहीं हुई। पर आजकल जब कृष्णस्वामी उससे कोई काम करते हैं तो भगवान् से क्षमा-याचना कर लेते हैं और साथ-ही-साथ पिता-माता को प्रणाम कर लेते हैं। उनकी माँ अपनी सारे गहने कृष्णेन्दु को दे गई थीं। कृष्णेन्दु पास हुआ है। इन गहनों में से चूड़ियों का जोड़ा बहू को देगा और बाकी गहनों के रुपयों से डिस्पेन्सरी खोलेगा। श्राद्ध के बाद उसके पिता ने वे सब उसके हाथों में रख दिये थे। कहा था, “लो रखो। तुम्हारी माँ तुम्हें ही दे गई है, अपने पास ही रखो ! तुम्हें पढ़ाने के बाद मेरा हाथ अब खाली है। गरीबी में क्या कर बैठूँ, कोई ठीक नहीं।”

वह कृष्णेन्दु माँ का लाड़ला था। गृहस्थी की सभी चीजों पर उसीका पहला अधिकार था। वह लेना ही जानता था, देना नहीं। सीखा ही न था। देना पहली बार उसने रीना को स्वयं को देकर ही सीखा।

छोड़ी रीना की बात। उसका कल्याण हो ! उसकी बात सोचते-सोचते बीच-बीच में लगता है, रीना ने निज को उसे नहीं सौंपा, उसके

बजाय लौटाने के समय अपने ईश्वर को देकर स्वयं कंगाल हो गई। ईश्वर, उसका मंगल करो ! हे ईश्वर, उसकी जीवन-समाधि को जीवन्त करके तुम फिर से जाग उठो ! मनुष्य की प्राण-शक्ति की सदबुद्धि, उसे हाथ के इशारे से बुलाने के प्रकाश, ईश्वर, तुम जागो ! रीना को तुम्हारे हाथों समर्पण करके कृष्णस्वामी निश्चिन्त है।

रीना अँधेरे में विलीन हो जाती है। मन से दूर हो जाती है।

कृष्णस्वामी को पिता की याद आती है—अल्पभाषी, निर्लिप्त व्यक्ति, बेहद कठोर। एक वाक्य में कृष्णेन्दु से कह दिया था, “जाओ ! तुम्हारी ज़रूरत नहीं !” ठाकुरजी को लेकर वृन्दावन चले गए थे। सारी सम्पत्ति बेच दी थी। कुछ और रुपया ठाकुरजी के मठ में दे गए हैं। अपने जीवन में उन्होंने थोड़ा ही रुपया खर्च किया था। बाकी तेरह हजार कुछ-एक सौ रुपया बैंक में रखा था। वकील से कह गए थे, कृष्णेन्दु की तलाश करके उसे दे देना। वह कृष्णस्वामी को मिला है। उसीसे आश्रम चलता है। किन्तु इस प्रकार आश्रम को कुष्ठ अस्पताल बनाने से कितने दिन चलेगा। यहीं कृष्णस्वामी ने कुष्ठ रोगियों की एक डिस्पेन्सरी-सी बना डाली।

लालसिंग और सिन्धु संतुष्ट हो उठे, “बाबा साहब ! यह ठीक नहीं है।”

कृष्णस्वामी हँसते हैं। बीच-बीच में पूछते हैं, “तुम्हें डर लगता है लालसिंग ?”

लालसिंग मौन द्वारा ही सूचित करता है, हाँ लगता है।

सिन्धु साफ़ कहती है, “हाँ बाबा साहब ! महामारी से किसे डर नहीं लगता ? हाँ, आपको सचमुच नहीं है। सो आपका पुत्र है, हमारे भाग में तो कोई पुत्र नहीं। क्या करें बताइए ?”

बबरं भुमकी को भय नहीं होता, घृणा होती है। कहती है, “बहुत बुरी गन्ध आती है। कैसी बदबू ! ओफ़ ! और क्या हो जाता है... आक् थू !”

बीच-बीच में वह अमरीकी फ़ौजी अफ़सर आता है। अब वह “हे मैन” नहीं कहता। कहता है, “वैल रेवरेण्ड !”

बीच-बीच में वह रीना की बात भी चलाता है। कहता है, “मुना है आसाम फ़ण्ट पर धूम रही है। ठीक नहीं कहा जा सकता। पर बात उस डेयर-डेविल लड़की के साथ बहुत मेल खाती है।”

“आसाम ?”

“येस ! गौहाटी, शिलांग, चटगाँव। जस्ट लाइक हर, लाइक ए शूटिंग स्टार।” बीच-बीच में भुमकी को देखकर निर्लज्ज भाव से हँसता है, इशारे करता है।

कृष्णस्वामी याद दिला देते हैं, “यह असल में एक चर्च है, मिस्टर ऑफ़िसर !”

सामने युद्ध है। जिसके लिए मौत का परवाना कट चुका है। वे लोग जितने उद्दाम होते हैं, उतने ही भीरु भी। ईश्वर के रोष से भय किये बिना नहीं रह सकते। कम-से-कम ईश्वर को अप्रसन्न नहीं करना चाहते। अफ़सर क्रॉस का चिह्न बनाकर चला जाता है।

कोई एक वर्ष के बाद अचानक एक दिन कृष्णस्वामी ने लालसिंग से कहा, “लालसिंग तबियत बड़ी खराब-सी लगती है, मैं कुछ दिन के लिए बाहर जा रहा हूँ।”

“कहाँ जायँगे बाबा साहब ? आपके न होने पर हम लोग यहाँ कैसे रहेंगे ?”

“पन्द्रह-बीस दिन ज़्यादा नहीं। तुम लोग गाँव के भीतर जैसे रहते हो वैसे ही रहना !”

पच्चीस दिन, बाद कृष्णस्वामी लौट आए। तबियत ठीक नहीं हुई थी, बल्कि कुछ कमज़ोर हो गए थे। सिन्धु ने कहा, “तबियत और भी खराब कर लाये बाबा साहब !”

“बहुत भटकता रहा सिन्धु ! बहुत दिन यहीं रहते-रहते मन उकता गया था । छुट्टी पाकर खूब घूमा । ठीक लड़ाई के आस-पास की जगहों में । शिलांग, गौहाटी, यहाँ-वहाँ । घूमने-भटकने से देह कमजोर होगी ही ! पर हाँ, मन अच्छा हो गया है ।”

चटगाँव से लगाकर गौहाटी तक युद्ध के सीमावर्ती स्थानों में उन्होंने पता लगाया था । हाँ, खबर मिली है । ठीक वैसी ही एक स्त्री थी । वह मर गई । किसी ने उसकी हत्या करके गौहाटी से शिलांग के पहाड़ी रास्ते में एक खड्ड में फेंक दिया था ।

सम्भवतः कोई निष्ठुर सैनिक रहा होगा । रीना के उद्धत व्यवहार से क्रुद्ध होकर उसे मार डाला होगा । पोस्टमार्टम में पता चला कि उसके पेट में शराब थी और यह भी पता चला कि अभागिनी जघन्य रोग से पीड़ित थी ।

कृष्णस्वामी निश्चिन्त हो गए । रीना अपने जीवन का पावना समझकर चली गई अथवा निष्ठुर मूल्य द्वारा इस उल्का-जीवन का देना चुका गई । पुलिस-विभाग को उसका कोई परिचय नहीं मिला । कृष्ण-स्वामी से ही उन्होंने प्रश्न किया था, “उसे जानते थे क्या ?”

“नहीं ।”

कृष्णस्वामी ‘नहीं’ कहकर ही चले आए थे । हे ईश्वर, अब मुझे अपनी सेवा में लीन कर लो ! यह संकल्प लेकर ही लौटे हैं । कलकत्ता से बड़ी मुश्किल से दवाइयाँ भी खरीद लाये हैं । उन्हें उसी दिन सजा डाला ।

अगले दिन सवेरे भुमकी आकर खड़ी हो गई । “बाबा साहब !”

“क्या ?”

“लालसिंग कल रात चला गया है ।”

“चला गया है ? क्या मतलब ? कहाँ चला गया है ?”

“क्या पता ? ये वे लोग जानें । कहता था कोढ़ का इलाज करते-करते साहब को भी कोढ़ हो गया । कोई बच सकता है ? चल सिन्धु,

भागकर जान बचा लें !”

“क्या कहा ? किसे कोढ़ हुआ है ?”

“क्यों, आपको हुआ है !”

कृष्णस्वामी विस्मय-विस्फारित दृष्टि से देखते रह गए। उन्हें कुष्ठ हुआ है ? कुछेक क्षण बाद उनकी बुद्धि सक्रिय हुई। “कहाँ ? किधर ?”

अपनी उँगलियों को देखने लगे। एक छोटा-सा शीशा दीवार पर टंगा हुआ था, उसके सामने जाकर खड़े हुए। “किधर है ? कहाँ ?”

भुमकी बोली, “ऊँ हूँ ! ऊँ हूँ ! जैसे दाग देखकर आप बताते हैं— यह कोढ़ का लच्छन है, वैसा ही एक गोल-गोल दाग आपको हुआ है। पीछे की तरफ। आपको दीखेगा कैसे ?”

कृष्णस्वामी के कुरते को उठाकर पीठ पर एक जगह उँगली रखते हुए भुमकी ने कहा, “यह रहा। यही। कैसा दाग है यह ? एँ ?”

कृष्णस्वामी निश्चल खड़े रह गए। सिर से पैर तक एक विचित्र सनसनी-सी दौड़ गई। मानो वह थोड़े-से अवश हो गए हों। उन्हें चोट लगी। वह इसके लिए तैयार नहीं थे। यह नहीं कि इसकी सम्भावना नहीं रही, पर सत्य जब सचमुच आ पहुँचा तब सहन करने में कष्ट हो रहा है। सचमुच वही है। भुमकी ने जहाँ उँगली रखी थी वहाँ खाल नहीं है; भुमकी की उँगली का स्पर्श उन्हें अनुभव नहीं हुआ।

रीना ! रीना के कारण। कुछ भी जैसे मन के भीतर पकड़ाई नहीं आता। मन उस ओर से इतना व्यग्र था कि बाकी सब उनकी आँखों के आगे से अनजाने में ही निकलता चला गया था।

मस्तिष्क के भीतर कोश-कोश से वेदना का आवेग धरती के गर्भ में छिपी हुई अग्नि की भाँति फूटकर निकलना चाहता है। कृष्णस्वामी ने पहाड़ की भाँति उसको अपने भीतर छिपा रखा है। काँपने नहीं देंगे। फूटने नहीं देंगे। अग्नि धरती के गर्भ में प्राणों के उत्पाद में परिणत हो जाय। प्राणों के कोश-कोश में वह अग्नि सहस्र प्रदीप-शिखाओं की भाँति भगवान् की आरती के रूप में, आनन्द की दीपावलि के रूप में

जल उठे !

बहुत देर बाद आत्मस्थ होकर उन्होंने कहा, “मैं बाँकुड़ा जा रहा हूँ भुमकी !”

बाँकुड़ा में नया क्या बतायेंगे ? कहेंगे, रोग छूत से हुआ है। अनिवार्य है। इसके बाद ? कहाँ जायेंगे, क्या करेंगे ?

हाँ, आ पहुँचा है। कार्य-कारण का परिणाम ! कृष्णस्वामी को तिरस्कार-भरी बातें भी सुननी पड़ीं। सामूहिक वैज्ञानिक प्रयत्न के बाहर इस प्रकार अकेले एक व्यक्ति की कोशिश की यही अनिवार्य परिणति है !

कृष्णस्वामी चुप ही रहे। केवल एक हँसी की रेखा धीरे-धीरे उनके मुख पर खिल उठी थी।

• लार्ड, आई क्राइ अनटु दी : मेक हेस्ट अनटु मी।

“कोई बहुत चिन्ता का कारण नहीं है, पर इस प्रकार आपका लोगों का इलाज करते हुए घूमना ठीक नहीं होगा।”

“अवश्य। ये उनका निर्देश है। आते-आते मैं सोच चुका हूँ। मैं चला जाऊँगा। कुम्भकोणम के लेपर असाइलम में। वहीं मेरी चिकित्सा भी होगी और मैं डाक्टर की हैसियत से कुछ काम भी कर सकूँगा।”

“गॉड बी विद यू !”

मद्रास समुद्र के किनारे कुम्भकोणम कुष्ठाश्रम है। बड़ा भारी आश्रम है। पीड़ाग्रस्त भगवान् की सेवा का मन्दिर। आज रीना ब्राउन की याद आई। स्फटिक से बनी हुई मूर्ति की भाँति पवित्र कुमारी रीना ब्राउन। आसनसोल के चर्च यार्ड में उन्हें लौटाते समय, उनके ईश्वर-विश्वास को, उनके ईश्वर को क्या इसी रास्ते जाने का निर्देश दिया था ? नहीं। यह रास्ता उन्होंने स्वयं ही चुना है।

सैट ए वाच, ओ लार्ड, बिफोर माइ माऊथ : कीप दि डोर ऑफ माइ लिप्स।

एक भी क्षोभपूर्ण वाक्य कृष्णस्वामी के मुख से न निकला !

चलो कुम्भकोणम । आखिरी सहारा वही है ।

सत्य से अधिक विस्मयकारी और कुछ नहीं । द्रुथ इज स्ट्रेंजर देन फिक्शन । वास्तव जीवन में मृत व्यक्ति भी बच जाता है, कल्पना की कहानी में बचाने से अविश्वास होता है । वास्तव जगत् में प्राण कालिमा के साथ युद्ध करके उसकी सीमा को लाँघ जाने के लिए युग-युग से भटकते आए हैं, सामने क्षितिज पर आलोक के राज्य की उज्ज्वल महिमा आह्वान कर रही है, तो भी मनुष्य के कान में अविश्वासी बुद्धि कूट तकं करके कहती है, यह आलोक नहीं, भ्रम है । आलोक मिथ्या है, कालिमा ही सत्य है । अमृत कल्पना है, मृत्यु ही सत्य है ।

और भी आठ महीने बाद ।

कृष्णस्वामी कुम्भकोणम आश्रम में उस दिन थककर सोये हुए थे । उन्होंने यहीं अपना स्थान बना लिया है । सबसे कठिन रोगियों का वही इलाज करते हैं । उनका अपना इलाज भी होता है । रोग शुरू में बहुत बढ़ने के बाद अब कुछ थम गया है । नाक के किनारे कुछ सूज-से गए हैं । मुख पर, माथे पर, गालों पर अस्वस्थ रक्ताभ मसृणता दिखाई देने लगी है । दोनों कानों के किनारे भी फूल रहे हैं । हाथ की उँगलियाँ एकदम फूली नहीं हैं, पर तेल से सने हुए हाथों की उँगलियों की भाँति दिखाई पड़ती हैं । शुरू में रोग बड़ी तेजी से ही बढ़ा था; अब रोग का वेग रुक गया है ।

इधर काल की पटभूमि पर बड़े-बड़े परिवर्तन हो चुके हैं ।

लड़ाई खत्म हो गई । देश में विस्मयकारी राजनीतिक परिवर्तन हुए । भारतवर्ष स्वाधीन हो रहा है । भारतवर्ष विभक्त हो रहा है । कृष्णस्वामी देखते हैं और रोज ही कहते हैं यह जय तुम्हारी ही जय है ! मनुष्य के भीतर सत्य की तपस्या ही तुम हो ! तुम्हारी ही जय है !

कलांत दृष्टि से अपने कमरे के खुले दरवाजे से वह सामने की ओर

ताक रहे थे। एक डॉक्टर ने आकर कहा, “रेवरेण्ड, एक अंग्रेज सज्जन अपनी पत्नीसहित तुमसे मिलने आये हैं। मैंने कहा कि तुम्हारी तबियत ठीक नहीं, पर वे बोले कि बहुत दूर से आये हैं। यह भी कहा, कहिए मेरा नाम है जॉनी, जॉन क्लेटन !”

“जॉन क्लेटन !” विस्मयसे कृष्णस्वामी चौंक उठे। “जॉन क्लेटन पत्नी सहित उनसे मिलने आया है, इस लेपर एसाइलम में ? कहाँ ? कहाँ हैं ?”

अचानक कमरा कांपने लगा, पैर के नीचे की मिट्टी भी मानो कांप रही है। सामने के पेड़-पत्ते, धरती-आकाश सब जाने कैसे हुए जा रहे हैं, क्या हुआ जा रहा है ! ज्योतिर्लोक मानो फटा जा रहा है !

कृष्णस्वामी चीत्कार कर उठे, “रीना !”

जॉन क्लेटन की बगल में रीना थी। रीना क्लेटन। क्लेटन की पत्नी !

हाँ कृष्णेन्दु ! मैं। मुझे देखकर तुम्हें विस्मय होना स्वाभाविक ही है। पर तुम, तुम मुझे आश्चर्यजनक रूप से अशरीरी की भाँति पीछा करते हुए मुझे दिन-रात बुलाते रहे हो। कम बैंक, कम बैंक, लौट आओ, लौट आओ ! यही पुकारते रहे हो। लौटना चाहा। तुम्हें अकेला छोड़कर चली भी गई। पर कौन मेरी ओर हाथ बढ़ाता। किसका हाथ पकड़कर मैं फिर से मनुष्य के हृदय-राज्य में प्रवेश करती। तुम्हारी बात सोची थी। पर वह नहीं हो सका। भय के कारण नहीं हो सका। मैं गोली से...

रीना चुप हो गई। शायद वह बात मुँह से नहीं कह सकी।

कृष्णस्वामी का विस्मय दूर होता जा रहा है।

रीना बोली, “तुमने कहा था, मनुष्य के हृदय में उसकी मन्द बुद्धि नित्य भगवान् के पुत्र को क्रॉसविद्ध करती है और वह नित्य नये जीवन में जाग उठते हैं। यह सत्य मैंने भी अनुभव किया, पर तो भी तुम्हारे सामने नहीं जा सकी। तुम्हारी वह भयंकर बात मेरे कान में बजती

रहती थी। तुमने कहा था, 'मैं यहाँ रहूँगा टु बी क्रूसफ़ाइड अगेन।' तुम संन्यासी हो, तुम सेण्ट हो, तुम्हारे पास खड़ी होकर मैं तुम्हें कलुषित कर सकती हूँ, किन्तु....।"

रीना की आँखों से अश्रु-धारा वह निकली।

जॉन क्लेटन मानो कृष्णेन्दु का वह पुराना बन्धु ज़ाँनी नहीं। अथवा कृष्णस्वामी ही वह कृष्णेन्दु नहीं। जॉन क्लेटन भी उनके साथ सभ्रम-पूर्वक बात कर रहा था। अवश्य ही क्लेटन भी अब वह क्लेटन नहीं रहा। वह बदला हुआ वयस्क व्यक्ति है, जला हुआ व्यक्ति। बहुत दुःख पाया है। पहली स्त्री विवाह-विच्छेद करके चली गई। युद्ध में बन्दी होकर बहुत दिन पूर्वी प्रदेश के बन्दी शिविर में काट चुका है। आज भी उसकी देह दुर्बल है। भीतर-बाहर आघातों के चिह्न स्पष्ट दिखाई देते हैं। क्लेटन के कान के पास गोली का दाग है। माथे पर बहुत-सी रेखाएँ उभर आई हैं। उसका कण्ठ-स्वर शांत हो गया है।

क्लेटन बोला, "युद्ध में बन्दी हो गया था। छूटने पर कुछ दिनों बाद काश्मीर गया। सोचा था शरीर कुछ स्वस्थ होगा। मन के भीतर यकान की कोई सीमा नहीं। हठात् काश्मीर में रीना को देखा। तूफान में पंख टूट जाने पर लँझरे हो जाने वाले पक्षी को देखा है कृष्णेन्दु?"

हँसकर क्लेटन ने कहा, "तुम्हें कृष्णेन्दु कहने में संकोच होता है, रेवरेण्ड, तुम सचमुच ही पवित्र हो।"

कृष्णस्वामी ने कहा, "एक-मात्र भगवान् ही पवित्र हैं, क्लेटन ! जो जीवन की वेदना को उनके चरणों में ढालने के लिए उनके मुख की ओर ताकते रहते हैं, उनके ऊपर भगवान् का आलोक पड़ने से ही वे पवित्र जान पड़ते हैं। नहीं तो वे भी मनुष्य हैं क्लेटन !"

फिर बोले, "और बताओ ! मेरी धारणा हो गई थी कि रीना जीवित नहीं है। ऐसी ही एक खबर पाकर मैं शिलांग गया था। वहाँ जाकर सारा विवरण सुनकर लगा कि वह सचमुच रीना ही होगी। किसी ने एक लड़की की हत्या करके खड्ड में फेंक दिया था।"

रीना ने दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा, “कितने खड्डों में, कितने जंगलों में, ऐसी कितनी हतभागिनियों का जीवन समाप्त हुआ है; देह को गिद्धों और गीदड़ों ने खाया है, मिट्टी के साथ मिला दिया है, इसका कोई हिसाब नहीं। मेरा भी यही होता कृष्णेन्दु। अगर उस दिन तुमसे मुलाकात न होती, अगर तुम्हारी स्मृति मेरे पीछे देवदूत की भाँति दिन-रात न चक्कर काटती रहती, तो मेरा भी यही हाल होता। मैंने वहाँ से भागकर छिपना चाहा था। उनकी हृद के बाहर दूर-दूरान्तर में भटकती-भागती फिर रही थी। आसाम, शिलांग, चटगाँव में उस समय जो लोग थे वे पागल थे। सारे जीवन की क्षुधा पुञ्जीभूत करके उस समय वे लोग राक्षस की भाँति हो उठे थे। उधर मैं न गई। मैं चली गई थी शिमला की ओर। वहाँ से फिर कितनी जगह। बस शराब पीती थी। उस समय कभी मरकर पीछा छुड़ाना चाहती और कभी भीषण क्षोभ से उल्का की भाँति झपटना। कितनी ही बार, यूँ नो, तुम्हें आश्चर्य होगा, मैं बार जोन की ओर आगे रास्ते जाकर अचानक लौटकर भाग आई। काश्मीर में जब अधमरी शराब में चूर एक निर्जन स्थान पर पड़ी थी, तो दो पशु मेरे पीछे पड़ गए।”

सन्ध्या के बाद वे लौटने को बाध्य हुए। रीना तब लगभग अचेत थी और बस अपने-आप बड़बड़ा रही थी। उन्हें लाश से आनन्द नहीं मिला, उसे छोड़कर जाते समय लातें मार रहे थे। उसी रास्ते से क्लेटन आ निकला। उसने देखा तो दौड़कर आया। अफसर का बैज देखकर वे लोग भाग खड़े हुए। क्लेटन देखकर सिहर उठा।”

रीना ! रीना ! हाँ, रीना ही तो है !

उसने पुकारा था, “रीना, रीना !”

रीना बकती-बड़बड़ाती ही रही। वे लोग जो बातें नहीं समझ सके थे उसे समझने में क्लेटन को तनिक भी कठिनाई न हुई। रीना कह रही थी, “इट इज़ दि काँज़, माई सोल !”

और कोई सन्देह बाकी न रहा। रीना ब्राउन ही है ! वह रीना को

कन्धे पर उठाकर ले आया था। बार-बार कान में कहता जाता था, “रीना माइ डार्लिंग, रीना माई लव, रीना माइ एंजिल ! आई लव यू, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ, मैं तुम्हें प्यार करता हूँ !”

पहले तो रीना को विश्वास नहीं हुआ।

क्लेटन ने रीना को अपनी कहानी सुनाई थी। उसके बाद कहा था, “प्रथम यौवन का वह मैं दुःख की आग में जल चुका है। ग्लानि, आवर्जना ही जलती है, राख होती है : जो खरा है, वह राख नहीं होता, जलकर शुद्ध होता है। मैं तुमसे इतना ही कहता हूँ रीना, ट्राई मी, मेरी परीक्षा करके देखो !”

रीना बोली, “क्या करती ? तुम्हारे पास खड़े होने योग्य शक्ति मेरे भीतर तब न थी। मैंने उस पर ही विश्वास कर लिया। और उसने तो अपनी बात सच कर दिखाई। उसने अपने प्यार को प्रमाणित कर दिया है। दोनों हाथों से मुझे जकड़ लिया। तुमने मुझे आशीर्वाद दिया था कृष्णेन्दु, मुझे विश्वास था, वह उसके रूप में मुझे मिला। तुम सेण्ट हो कृष्णेन्दु ! तुम सेण्ट हो !”

उसके बाद एक गहरी लम्बी साँस लेते हुए बोली, “मुझे बड़ा दुःख है, तुम्हारी इस अवस्था में कोई सेवा नहीं कर सकी।”

कृष्णस्वामी सामने क्षितिज की ओर ताक रहे थे। उधर देखते-देखते ही बोले, “शायद यही मेरा पुरस्कार है रीना ! इससे ही उन्होंने मेरी सब अतृप्त कामनाएँ तृप्त कर दीं।”

फिर हँसे, हँसकर बोले, “देखो, हमारे देश के शास्त्रों में लिखा है, एक साथ सात कदम चलने से मित्रता होती है। हम लोगों के विवाह में स्वामी-स्त्री अग्नि को साक्षी करके सात कदम एक साथ चलते हैं। पर जब मनुष्य भगवान् की खोज करता है तब वह अकेला होता है, किसी के साथ सात कदम नहीं चला जाता, बन्धु के साथ भी नहीं। बिलकुल अकेले। उस रास्ते पर विचित्र रूप में आशीर्वाद भी मिलता है, अभिशाप

भी ! और—। सात कदम एक साथ चले बिना संसार के आनन्द में नहीं लौटा जा सकता । तुम लोग साथ चले हो, द्वार खुल गए हैं । तुम्हारी गृहस्थी सुख से भरपूर हो ! मेरी यात्रा अलोन ! मैं सुखी हूँ ।” सब स्तब्ध हो गए ।

क्लेटन ने वह स्तब्धता तोड़ी, “हम लोग फिर आएँगे । मैं इंग्लैण्ड वापस नहीं जाऊँगा । रीना के साथ यहीं गृहस्थी बसाऊँगा । बार-बार आऊँगा ।”

“यहीं रहोगे तुम लोग ? तो फिर...तो फिर मैं एक अनुरोध करूँगा । रीना, तुम मेरा आश्रम जानती हो । वहाँ भुमकी नाम की एक अनाथ नारी है—उसे अपनी गृहस्थी में ले लेना ! अच्छा ! अब अधिक नहीं । जॉन, यू आर ए मैडिकल मैन । अब जाओ, और अधिक नहीं । गुड बाई ! गुड बाई ! रोओ मत रीना; नो-नो-नो ! मैं देखना चाहता हूँ कि तुम हँस रही हो । लुक इन माइ फ़ेस । देखो आनन्द के सिवाय कुछ भी क्या है ? कहाँ है ? गुड बाई ! गुड बाई ! गुड बाई !”

अपना लम्बा हाथ उठाये वह दीर्घकाय पुरुष पत्थर की मूर्ति की भाँति खड़ा रहा ।

